वैज्ञानिक चिंतन की आवाज़

तर्कशील पथ

मार्च - 2014



अन्दर पढ़े...

- नारी सशक्तिकरण, धर्म-विधान तथा राष्ट्र-संविधान
- दो बहनों का जुड़वां बहनें बनकर पुनर्जन्म
- युग कैसे बदलते हैं
- जीवन का सच
- ब्रह्माण्ड की यात्रा
- राष्ट्र धर्म निष्पक्ष नहीं निरपेक्ष हो

20/-

संस्थापक संपादक:
आर.पी.गांधी - 093154-46140
संपादक
बलवन्त सिंह (प्राध्यापक) - 094163-24802
पढ़ने के लिए लॉग ऑन करें:
www.tarksheel.com
संपादन सहयोग:-
गुरमीत अम्बाला-094160-36203
अनुपम राजपुरा: 094683-89373
बलबीर चन्द लोंगोवाल: 098153-17028
हेम राज स्टेनो: 098769-53561
अजायब जलालाना: 094167-24331
पत्रिका शुल्क:-
वार्षिक: 100/- रू.
विदेश: वार्षिक: 25 यू.एस.डॉलर
पत्रिका वितरण:
गुरमीत अम्बाला
e-mail:tarksheeleditor@gmail.com
रचनाएं, पत्र व्यवहार व शुल्क भेजने के लिए पता:
बलवन्त सिंह (प्रा.)
म.नं.1062, आदर्श नगर, नज़दीक पूजा सीनियर सैकण्डरी स्कूल, पिपली।
जिला कुरूक्षेत्र-136131 (हरियाणा)
e-mail:tarksheeleditor@gmail.com
तर्कशील सोसायटी की गतिविधियों से जुडने के लिए
www.facebook.com/tarksheelindia
पेज को लाईक करें

कम्पोजिंग एवं डिजाईनिंग
Gurmeet Singh C/o
Hindu Institute of Computer & Accounts
Lukhi Road, Bhiwani Khera, KKR.
e-mail:hindu.institute@gmail.com
M.No. 089502-82815

विशेष लेख:
4 नारी सशक्तिकरण, धर्म-विधान तथा राष्ट्र-संविधान
9 दो बहनों का जुड़वां बहनें बनकर पुनर्जन्म
11 युग कैसे बदलते हैं
17 जीवन का सच
23 भावना कभी नहीं मरती
24 ब्रह्माण्ड की यात्रा
27 राष्ट्र धर्म निष्पक्ष नहीं निरपेक्ष हो
37 हत्या
40 बाबागिरी का फर्जी धंधा
42 औप्टिज़्म
44 ईसाई धर्म और हिंसा

केस रिर्पोट:
35 रहस्यमयी हमलावर पकड़ा गया

नियमित स्तम्भ:
31 अंधविश्वास के चलते
32 बच्चों का कोना
33 तर्कशील हलचल
50 आईना
51 हरियाणवी रागिनी

सूचना

तर्कशील सोसायटी हरियाणा की द्विमासिक बैठक असन्ध, जिला करनाल में दिनांक 11-05-2014 दिन रविवार को प्रात: 10:00 बजे से दोपहर 2:00 बजे तक होगी सभी प्रतिनिधिगण समय पर अपनी उपस्थिति सुनिश्चित करें।

संपर्क सूत्र:

मेहर सिंह विर्क -098961-71943
मा.बलवन्त सिंह -094163-24802

विज्ञान ज्योति पत्रिका हेतु शुल्क स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, शाखा माडल टाऊन, अम्बाला शहर। (हरियाणा) में रैशनलिस्ट सोसायटी हरियाणा के नाम से खाता सं: 30191855465 में जमा करा सकते हैं। शुल्क जमा कराते समय 500 रुपये तक 10 रुपये अतिरिक्त जोडें एवं अपना पता मोबाईल नं. 94160-36203 पर **SMS** कर दें

नोट: किसी भी तरह की कानूनी कारवाई सिर्फ जगाधरी, यमुनानगर (हरियाणा) की अदालत में ही हो सकेगी।

संपादकीय

इच्छा मृत्यु का कानून

इच्छा मृत्यु का मुद्दा भारत में लम्बे समय से चर्चा का विषय बना हुआ है, जिसको लेकर याचिकाएं भी न्यायालयों में विचाराधीन हैं, इस संबंध में दो पहलू हैंः एक के अनुसार विभिन्न कारणों से जीवन से निराश व्यक्ति हैं, जोकि जीने की चाह नहीं रखते जिन्हें कानून के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक मशवरे की भी जरूरत है, दूसरे वे लोग हैं जो स्वास्थ्य संबंधी कारणों से भयंकर पीड़ा की यातना झेल रहे हैं, जिसके अंतर्गत वे लोग भी आते हैं जो कोमा में हैं एवं जिनमें पुर्न जीवन की कोई संभावना नहीं है, ऐसी स्थिति में पहुंच चुके लोगों के लिए विधि आयोग और चिकित्सा परिषद ने भी इच्छा मृत्यु की सिफारिश की है जबकि सरकार इस संबंध में सकारात्मक कदम उठाने को हिचकिचा रही है जिससे यह मामला लम्बित पड़ा है और न्यायालय मौजूदा कानूनों की रोशनी में ही फैसले देने के लिये बाध्य है, जबकि मौजूदा कानून मुख्यतः आई.पी.सी. अंग्रेजों द्वारा गुलामी के दौर का बनाया 1860 का कानून है जिसके कानूनी प्रावधान एक शताब्दी से भी पुराने हो चुके हैं, जिनसे आजाद भारत के नागरिकों को संचालित किया जाता है, जिसको आज के समय के अनुरूप बदलने की आवश्यकता है। इस एक शताब्दी में समाज में सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक रूप में बड़ी तेजी से परिवर्तन हुए हैं जिसमें सभी कानूनों की समीक्षा बेहद जरूरी है, जिसको लेकर फैडरेशन ऑफ इंडियन रैशनलिस्ट एशोसिएशन (फीरा) के नेतृत्व में देश भर के तर्कशील (Rationalist) संगठनों ने अन्य मांगों के साथ ही ला रिव्यू कमीशन बनाने की मांग को लेकर जंतर-मंतर पर 25 नवम्बर 2013 को धरना भी दिया था।

इच्छा मृत्यु को पैसिव यूथनेशिया भी कहा जाता है जोकि एक ग्रीक शब्द है, जिसका अर्थ है मृत्यु शया पर पड़े पीड़ा भोग रहे व्यक्ति को सहमति से ऐसी दवाएं दी जाएं जोकि पीड़ा रहित मृत्यु हो जाए। मौत की इस मांग के दो आधार हैंः दया मृत्यु (Mercy Killing) व इच्छा मृत्यु (Right to dai) भारत में कानूनी प्रावधान के अभाव में आई.पी.सी. की 309 के तहत यह अपराध माना जाता है। कोई अन्य अगर पीड़ित व्यक्ति के लिए दया मृत्यु की मांग करता है तो उस पर आई.पी.सी. की धारा 304 से केस बन सकता है।

विश्व के बहुत सारे देशों में इच्छा मृत्यु के कानून बने हैं जैसे हालेंड, न्यूजीलेंड, बेल्जियम, लग्जमबर्ग, स्पेन, स्विट्ज़रलैंड, थाईलैंड, अमेरिका के राज्य आरेगन व वाशिंगटन आदि। इस कानून के बनने से इन देशों में क्या सामाजिक प्रभाव पड़े हैं, इस का अध्ययन किया जा सकता है।

यह विषय गम्भीर परन्तु सार्थक कदम उठाने की मांग करता है, मृत्योपरांत आरग्न ट्रांसप्लांट का विषय भी इससे जुड़ सकता है जिसे नजर अंदाज नहीं किया जा सकता।

८ मार्च महिला दिवस पर विशेष

नारी सशक्तीकरण, धर्म-विधान तथा राष्ट्र-संविधान

रामसिंह प्रेमी, मोबाइल नं०-09450859504

समाज में महिलाओं की स्थिति में सुधार और उनके अधिकारों में वृद्धि ही नारी सशक्तिकरण कहा जाता है। यों तो मानव-सभ्यता के विकास-प्रारम्भ काल से नारी को मात्र भोग और सन्तानोत्पत्ति साधन माना जाता रहा है, फिर भी आज वह पुरुषों के साथ धरती से आसमान तक जीवन के हर क्षेत्र में अपनी क्षमता और कुशलता से होड़ लगाकर नये-नये कीर्तिमान स्थापित कर रही है। यद्यपि यहाँ तक पहुँचने में उसे पग-पग पर चुनौतियों और संघर्षों का सामना करना पड़ा है।

आज नारी सम्बन्धी व्याख्या में अवधारणायें काम करती हैं, जिनके आधार पर पुरुषवर्चस्ववादी समाज नर और नारी में भेद वृत्ति को सही सिद्ध करने का तर्क देता है। वे निम्न हैं-

1. जननिक(Genetic) आधार पर नर-नारी की शारीरिक बनावट, प्रजनन अंग तथा आवाज में अन्तर को लैंगिक भेद की मान्यता की पुष्टि करता है।
2. नारीत्व(Feminity) में रूढ़ियों, परम्पराओं, सामाजिक एवं धार्मिक जीवन मूल्यों के आधार पर समाज द्वारा नारी की मानसिकता गढ़ी जाती है। जन्म से ही कन्या को लज्जा, भय, सहिष्णुता, नम्रता तथा संतोष जैसे गुणों की शिक्षा दी जाती है और इसे ईश्वरीय विधान कहकर कन्या द्वारा स्वीकार करवाया जाता है।
3. नरीवाद(Feminism) की विचाराधारा में नारी की स्वतंत्रता और प्रगति हेतु नर-नारी के बीच ८८'की असमानता को खत्म कर के समतावादी सामाजिक व्यवस्था प्रस्थापित करने का सार्थक आग्रह है।

आज की नारी में रूढ़िगत मान्यताओं को अमान्य करने और प्रगतिशील जीवन मूल्यों को स्थापित करने के लिए एक छपटाहट है। वह जीवन के हर क्षेत्र में अबला से सबला बनकर नयी बुलन्दियों तक पहुँचने तथा स्वतंत्र चिन्तन और अपना मार्ग स्वयं निर्धारण करने के लिए कटिबद्ध है, क्योंकि मानव समाज में आदि काल से लेकर आज के वैज्ञानिक समाज तक में आधी आबादी (नारी वर्ग) के प्रति सदैव ऐसा भेद-भावपूर्ण दृष्टिकोण बनाया गया कि उसे कभी भी 'व्यक्तित्व' के रूप में विकसित होने का मौका नहीं दिया गया। उसे या तो 'देवी' ही बनाकर पत्थर की निष्प्राण मूर्ति के रूप में प्रस्तुत किया गया या फिर 'भोग्या वस्तु' के रूप में।

अतः विचारणीय है कि जब नारी को 'व्यक्ति' का दर्जा ही प्राप्त नहीं तो फिर उसके साथ व्यक्ति जैसे व्यवहार की अपेक्षा ही कैसे? परिणामतः नारियाँ समाज में एक अवैतनिक श्रमिक या उपभोग की वस्तु ही बनी रहीं। मानवता के मूल्यों के अनुसार मानवीय व्यवहार तो एक व्यक्ति के साथ अपेक्षित है, एक वस्तु के साथ नहीं। इसीलिए समाज ने उसके कभी 'नगरबधू' बनाया तो कभी 'देवदासी', कभी बाजार में बेंचा तो कभी जुयें के दाँव पर रख दिया।

भारतीय समाज के नीतिकारों, साहित्यकारों तथा धार्मिक ग्रंथों ने नारी को सदैव परतंत्र रहने की शिक्षा देकर पुरुषप्रधान सामाजिक व्यवस्था में उसकी आजादी छीन ली। उदाहरणार्थ देखिये-

अ- ऋगुवेद में वर्णित है - ''स्त्रियों के साथ मैत्री नहीं हो सकती। इनके दिल लकड़ बग्घों के दिलों से क्रूर होते है।''

ब- शतपथ ब्राह्मण के अनुसार- ''स्त्री, शूद्र, कुत्ते एवं कौवे में असत्य, पाप, एवं अधंकार विराजमान रहता है।''

स- मनुस्मृति कार ने अध्याय 2/213 में कहा- ''पुरुषों को दूषित करना स्त्रियों का स्वभाव है।''

इतना ही नहीं अ.5/147 में लिखा - ''बालिका हो या युवति अथवा वृद्धा स्त्री को स्वतंत्रतापूर्वक घर का भी काम नहीं करना चाहिए।'' अध्याय 9/2 श्लोक में - ''स्वयं पुरुषों द्वारा स्त्रियों

को रात-दिन कभी स्वतंत्र नहीं करना चाहिए।'' अध्याय 9/3 में लिखा - ''स्त्रियों की रक्षा बाल्यावस्था में पिता, युवावस्था में पति और वृद्धावस्था में पुत्र करता है, स्त्री कभी स्वतंत्रता के योग्य नहीं।'' मनुस्मृति के अध्याय 4/160वें श्लोक में लिखा गया -''पराधीन जीवन दुख, और स्वाधीन जीवन सुख है, संक्षेप में यही सुख-दुख का लक्षण जानना।'' ऐसे में स्त्री सार्वकालिक पराधीनता में रहकर निरन्तर दुख ही सहते रहनो उसकी नियति बन चुकी है। इसमें उसका ही अपना दोष है क्योंकि वह स्त्री है।

द- तुलसी ने तो नारी को 'सहज अपावन नारि' एक नारी अनुसुइया से ही कहलाया। दूसरी नारी पार्वती ने 'नारि सहज जड़ अज्ञ' कहकर नारी को जड़ श्रेणी में वस्तु के रूप में स्वीकार किया। 'ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी-सकल ताड़ना के अधिकारी' लिखकर तुलसी ने नारी को प्रताड़ना, मारपीट, और हिंसा सहन करने का स्वाभाविक अधिकार दे दिया। इतना ही नहीं- 'भईअतिवृष्टि कि फूट कियांरी - जिमिस्वतंत्र होइ बिगरहिं नारी' कहकर उसकी स्वतंत्रता पर भी प्रतिबंध लगाने में तुलसी भी पीछे नहीं रहे। राम-नारद संवाद में राम के मुख से ही नारी की निन्दा जो तुलसी ने करायी वह नारी वर्ग के ऊपर ईश्वरीय कलंक है -

''अवगुन मूल सूल प्रद, प्रमदा सब दुख खानि।
ताते कीन्ह निवरन मुनि मै यह जियँ जानि।।''

इसके अतिरिक्त तुलसी ने - ''भ्राता-पिता-पुत्र उरगारी-पुरुष मनोहरनिरखति नारी।

होइ विकल सक मनहि न रोकि-जिमिरविमणि द्रवरविहि विलोकी।'' कहकर नारी की अस्मिता पर ही ऐसी चोट की जिससे वह बेचारी आज तक उबर नहीं सकी है।

सच्चाई यह है कि समाज की मानसिकता पर तथाकथित इन धर्मग्रन्थों का ही प्रभाव अधिक पड़ता है और जीवन के हर क्षेत्र में नारी के आचार, विचार, त्योहार और संस्कार पर इस धर्म-विधान का ही शिकंजा कसा हुआ है। चाहे जितने कानून बनें और चाहे जितने प्रयास हों, लेकिन जब तक नारी को अंधी श्रद्धा में भ्रमित करके उसका शारीरिक और मानसिक शोषण बन्द नहीं होता, तक तक नारी अपने को चाहे जितनी सबला कहे किनतु यथार्थ के धरातल पर अबला ही बनी रहेगी। नारी सशक्तिकरण के नाम पर भले ही कुछ प्रबुद्ध, सशक्त और विशिष्ट नारियाँ अपने को स्वतंत्र कहें, सुखी और खुशहाल मान लें परन्तु आम नारी आज भी धर्म-विधान के मकड़जाल में फँसी हुयी जन्म से मृत्यु तक शोषण, अपमान, घृणा, प्रताड़ना और उत्पीड़न का दंश झेल रही है। इसलिए आवश्यक है कि नारी-मुक्ति के लिए हमको अंधविश्वास जनित अंधी आस्था के प्रेरक धार्मिक कर्मकाण्डों तथा उनके प्रेरणा-स्रोत प्रगतिशीलता और नारी जागरूकता के सारे प्रयास असफल रहेंगे।

हर वर्ष 8 मार्च को 'महिला-दिवस' मनाने का कोई भी विशेष सार्थक परिणाम देखने को नहीं मिलता। हम भाषण, कविता और सिंहनाद मंच से उच्चारण करके फिर उसी सांस्कृतिक और सामाजिक सोच में वैज्ञानिक दृष्टिकोण से मौलिक परिवर्तन नहीं ला पाते, जब तक हम धर्म-विधान को पूर्णतः अमानवीय घाषित करके नकार नहीं देते, और जब तक हम भारत के राष्ट्र-संविधान द्वारा नारी को प्रदत्त उसके मौलिक एवं विशिष्ट अधिकारों का क्रियान्वयन नहीं कर पाते, तब तक नारी-विमर्श, नारी सशक्तीकरण और नारी मुक्ति जैसे शब्दों का सार्थक्य सिद्ध नहीं हो पाता।

हमारे भारत के राष्ट्र-संविधान के अनुसार अनुच्छेद 15(1) के अन्तर्गत-राज्य किसी नागरिक के विरूद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा। अनु० 15(2) के अनुसार कोई नागरिक केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर दुकानों, सार्वजानिक मनोरंजन के स्थानों तथा स्नान घाटों या सार्वजनिक समागमों आदि में भाग लेने से वंचित नहीं होगा। अनु०15(3) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्यों को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबन्ध करने से निवारित नहीं करेगी। अनु०16(1) के अनुसार-राज्य के आधीन किसी पद पर नियोजन

या नियुक्ति संबंधी विषयों में सभी नागरिकों (नर-नारी) के लिए अवसर की समता होगी। अनु०16(2) के अनुसार- कोई नागरिक केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, उद्‌भव, जन्मस्थान, निवास या इनमें से किसी के आधार पर राज्य के आधीन नियोजन या पद के संबंध में अपात्र नहीं होगा या उससे विभेद नहीं किया जायेगा।

यह अधिकार जाति-विभेद के विरुद्ध रक्षोपय तो है ही, साथ ही यह स्थानीय विभेद या स्त्रियों के विरुद्ध विभेद से भी संरक्षण प्रदान करता है। अनु० 19 - वाणी अभिव्यक्ति, अबाध संचरण, निवास तथा जीविको पार्जन की स्वतंत्रता हर नागरिक को देता है।

इस प्रकार राष्ट्र-संविधान ने लिंग-भेद को पूर्णत- खत्म करके जीवन के हर क्षेत्र में समता का अधिकार देने के साथ-साथ नारी और बच्चों के विकास तथा उनके आगे बढ़ने के लिए विशेष नियम बनाने की भी बात स्पष्ट रूप से कही है।

73वें तथा 74वें संविधान संशोधन द्वारा अनु० 243(डी) तथा 243(टी) के अन्तर्गत स्थानीय निकायों के सदस्यों तथा प्रमुखों की कुल संख्या की 1/3 सीटें स्त्रियों के लिए आरक्षित कर दी गयी हैं। इसके अतिरिक्त 'घरेलू हिंसा सुरक्षा-अधिनियम 2005' के द्वारा स्त्रियों के साथ की जाने वाली सभी प्रकार की हिंसा शारीरिक, मानसिक, दहेज संबंधी, प्रताड़ना, गाली-गलौच, अपमानित करना आदि से बचाव के उपाय किये गये हैं। लिंग-भेद खत्म करके समता के व्यवहार के लिए सबसे अधिक योगदान 'पर्सनल लॉ' (Uniform civil code) 'समान-नागरिक संहिता' से होगा। इसे अपनाने की जरूरत है। यद्यपि लैंगिक न्याय (Gender justice) के दिशा में बहुत कुछ कर लिया गया है फिर भी अभी उससे कहीं ज्यादा करना शेष है। इसके लिए स्त्री शिक्षा पर जोर अनिवार्य हैं।

फ्रांस से प्रारम्भ 'स्त्रीमुक्ति आन्दोलन' (Ferrinist movement) ने स्त्रियों को पुरुषों का सहचर बनने की प्रेरणा दी। उन्हें स्वतंत्रता और अधिकारों के साथ गरिमापूर्ण जीवन जीने, घरेलू स्त्रियों की दासता पूर्ण जीवन शैली से मित्र संस्कृति और परिवेश में रहने की चाहना दी। तस्लीमा नसरिन ने लिखा- ''वास्तव में स्त्रियाँ जन्म से अबला नहीं होती, उन्हें अबला बनाया जाता है। 'स्त्री-शिशु' की जीवनी शक्ति 'पुरुष-शिशु' की जीवनी शक्ति से अधिक प्रबल होती है, किन्तु समाज अपनी सांस्कृतिक मान्यताओं, रिवाजों, रूढ़ियों और जीवन मूल्यों से उसे सबला से अबला बना देता है।''

भाव यह है कि कन्या-शिशु को बचपन से ही हर क्षण यह सिखाया जाता है कि वह लड़की है, कमजोर है, उसे 'यह' करना है और 'यह' नहीं करना है, उसकी इज्जत से साथ पूरे परिवार की इज्जत जुड़ी है, वह इस घर की थाती मात्र है, उसे तो दूसरे के घर जाना है इत्यादि।

इस प्रकार के निरन्तर उपदेशों से स्त्री के मन में स्वयं को पुरूष कमजोर होने की भावना तथा मानसिकता घर कर लेती है जिससे वह जीवन पर्यन्त उबर नहीं पाती। उदाहरणार्थ- 20वर्ष की स्वस्थ युवती के साथ 12 वर्ष का उसका भाई उसकी रक्षा हेतु उसके साथ घर के बाहर जाने पर भेजा जाता है। यह हास्यास्पद नहीं तो और क्या कहा जायेगा?

नारी सशक्तिकरण या नारीवाद इस प्रकार की मानसिकता का घोर विरोध करता है। आज के प्रगतिशील युग में नारी वर्ग को सर्वाधिक महत्व देना होगा। उसकी प्रजनन-क्षमता का सम्मान करना होगा, किन्तु अफसोस है कि आज हम उसके इसी महान प्राकृतिक वरदान को उसके लिए अभिशाप के रूप में बदलने की कोशिश करते हैं। हमें एहसास करना होगा कि यौन शोषण नारी के लिए शारीरिक प्रताड़ना से कहीं अधिक मानसिक प्रताड़ना होता है। पुरुष अपने उस अपराध को नारी के माथे पर मढ़कर स्वयं को अपराध मुक्त कर लेता है जिसके लिए वस्तुतः नारी किसी भी तरह से अपराधिनी नहीं होती। प्रेरणा स्रोत हैं धार्मिक ग्रंथ जिनमें बलात्कारियों को महिमा मण्डित किया गया है। ऐसे धर्मग्रंथों को नकार करके हमें दृष्टिकोण बदलना होगा। नारी का सम्मान करना होगा।

नारी वस्तुतः प्रकृति का वह शक्तिरूपा

वरदान है जो मानव समाज के विकास की प्रारम्भिक अवस्था से लकेर आज तक उन सामाजिक दायित्वों का चुनौतियों और संघर्षों के बावजूद सफलतापूर्वक निर्वहन करती चली आ रही हैं जिन्हें पुरुष के कन्धे किसी भी प्रकार बर्दाश्त करने में सक्षम नहीं हैं। नारी ने हर युग में हर समय पुरुष को माता के रूप में ममता और करुणा दी, अपने रक्त और से सृजन और पोषण किया, बहन के रूप में प्यार और प्रेरणा दी, पत्नी के यप में मनोरंजन, सार्थक सहयोग और संत्रणा दी तथा पुत्री के रूप में सुख और आनन्दानुभूति दी, परन्तु फिर भी पुरुष ने उसके साथ सदैव लैंगिक भेद जनित विषमता के कारण उसे उपेक्षा, घृणा और तिरस्कार ही दिया।

जिस नारी ने राष्ट्र की भावी नागरिकों को अपने रक्त से जन्म देकर दूध से सदैव सींचकर एक अच्छे नागरिक वाले राष्ट्र-निर्माण में महती भूमिका अदा की, वह नारी निर्विवाद यप से किसी भी राष्ट्र के लिए किसी भी वरदान से सम नहीं है। परन्तु 67 वर्ष आजादी के बीत जाने के बाद भी भारत का यह दुर्भाग्य ही कहा जायेगा कि इतनी महत्वपूर्ण आधी आबादी (नारी वर्ग) को उपेक्षा, अपमान, तिरस्कार, घृणा, उत्पीड़न, छेड़छाड़, यौन शोषण, बाल-विवाह, भ्रूण-हत्या, कन्या-दान और दहेज जैसी अमानवीय दुष्प्रवृत्तियों के घातक दंश झेलने पड़ रहे हैं। क्या यह पुरुषवर्चस्ववादी मानसिकता की घिनौनी साजिश और हैवानियत नहीं है?

देखिये न, आज भी आजाद भारत में प्रजातंत्र के चारो स्तम्भ 'नारी-अस्मिता' के साथ खुला खेड़वाड़ करने में नहीं चूकते हैं। जब शासन-प्रशासन, न्यायालय, मीडिया, तथा धर्मक्षेत्र के तथाकथित स्वयंभू भगवानों की काली करतूतों से रोज समाचार-पत्र भरे रहते हैं, तो फिर सामान्य पुरुष राष्ट्र, समाज और मानवता के नाम पर कलंक हैं।

आज भी परम्परागत विचारों वाले लोग, चाहे जिस दायित्व वाले पद पर हों, चाहे जिस सामाजिक संगठन में हों, यही मान रहे हैं कि औरत अपने अपमान और यौन शोषण के लिए स्वयं जिम्मेदार है। उनका माना है कि औरत स्वयं पुरुष को उकसाती है। ऐसे लाग और संगठन यह भूल जाते हैं कि मासूम बच्चियों और छोटी-छोटी लड़कियों के साथ दुर्व्यवहार की घटनायें सिर्फ और सिर्फ पुरुषों की हैवानियत और दानवी प्रवृत्ति की ही सूचक हैं। उनकी वासनामय मानसिक विकृति नारी जाति के लिए अभिशाप है।

आधी आबादी की सुरक्षा और उन्हें मानवी जीवन मूल्यों के साथ स्वाभिमान से जीने के अधिकार की रक्षा हेतु बने भ्रूण-हत्या, दहेज, यौन शोषण, घरेलू हिंसा तथा वैश्यावृत्ति के निषेध तथा सुधारवादी कानून आज भी किताबों में ही कैद रह गये। उसका कारण है कि सड़क छाप आम आदमी तो कभी-कभी ऐसे अपराधों में दण्डित हो जाते हैं किन्तु शक्ति सम्पन्न, उच्च पदस्थ, ऊँची पहुँच वाले, धन्नासेठ बहुधा बरी हो जाते हैं। जहाँ तक बाबाओं और स्वयंभू भगवानों की बात है, वे तो राजनीतिक संरक्षण, धनवल और जनबल की बदौलत न्यायालय को भी चकमा दे देते हैं और हिन्दुत्ववादी साजिश के तहत अमुक बाबा पर यौनशोषण या हत्या का झूठा आरागप लगाया जाता है। फिर क्या, ऐसे धूर्त बाबा अपराधों से बच निकलते हैं।

विचार कीजिए कि हजारों सालों से बाबा भगवानों की फौज, मन्दिरों में पूजन, कथा-भागवत और धर्मग्रंथों के पाठ, सत्संगों के समागम और साधू-संतों तथा राजनेताओं के मंचों से भाषणों ने समाज में आजतक कोई भी सकारात्मक प्रभाव नहीं डाल पाया। नैतिकता और चरित्र दोनों का अभाव दिनों दिन बढ़ता ही जाता है। वास्तविकता यह है ये सब अपने-अपने स्वार्थ में लगे हैं। जो ये लाग समाज को देते हैं वह धोखा, छलावा, झूठ और भ्रम के अलावा कुछ नहीं। ये सभी अपनी घिनौनी साजिश और दलदल में आम आदमी को फँसाकर खुद स्वर्ग का ऐश्वर्य और आनन्द भोगने में जुटे हैं। अतः अब हमें ईश्वर, धर्म, आस्था, श्रद्धा और गुरू जैसे शब्दों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से समझना अनिवार्य हो गया है।

याद रहे कि किसी भी राष्ट्र के उत्थान में आधी जाबादी यानी नारी की भूमिका को नकारा

नहीं जा सकता। राष्ट्र के निर्माण और विकास में नारी का सबसे बड़ा योगदान घर-परिवार एवं बच्चों की देख रेख करना प्रारम्भ से रहा है। नारी ने जिस क्षमता, कुशलता तथा प्रमाणिकता से यह कार्य किया है और आज भी कर रही है, उस योग्यता और क्षमता का पुरुष में सर्वथा अभाव है। ऐसी स्थिति में परिवार के समुचित विकास और राष्ट्र की सुयोग्य भावी पीढ़ी के निर्माण हेतु नारी की अच्छी शिक्षा अनिवार्य है। जब नारी शिक्षित होगी, तब वह अपने संवैधानिक अधिकारों और कर्तव्यों को जानेगी, समझेगी और तब उसमें स्वतंत्र चिन्तन तथा विवेक बुद्धि का विकास होगा और तब वह किसी साजिश, बहकावे अथवा अंधी श्रद्धा या आस्था का शिकार भी नहीं होगी। वह स्वयं स्वतंत्र तथा स्वाभिमान पूर्ण जीवन जीते हुए राष्ट्र की भावी पीढ़ी में स्वतंत्रता, तर्कशीलता और स्वाभिमान जैसे मानवीय गुणों को विकसित करने में पर्णरूपेण सक्षम होगी।

वस्तुतः नारी चेतना, नारी-विमर्श और नारी आस्मिता को ही नारी-सशक्तिकरण कहते हैं। नारी भोगवाद के दर्शन से मुक्ति पाकर यथार्थवाद को अपनाना चाहती है। नारियाँ अपनी आजादी के लिए 'नारी-संघर्ष' चला रही हैं। इनका संघर्ष उस 'पितृसत्ता' के खिलाफ है जो नारी को उसके 'स्व' के साथ जीने से रोकती है। नारी अब उस परम्परागत घर की चहारदिवारी में कैद रहना नहीं चाहती जौ उसकी सुरक्षा के नाम पर उसे बन्दी बनाये रखने का षड्यंत्र है।

आज स्त्री केवल माँ बनकर ही संतुष्ट नहीं, वरन् वह एक स्वतंत्र व्यक्तित्व की तरह सामाजिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में स्वयं को प्रतिष्ठित करना चाहती है। उसने यह भली भाँति समझ लिया है कि हमारे धर्म, दर्शन और साहित्य में जितना मातृत्व का स्थान ऊँचा कहा गया है उससे कहीं ज्यादा उसे उसके अन्य रूपों में अपमान, घृणा और तिरस्कार मिला है 'नारी तुम केवल श्रद्धा हो' बताकर नारी की श्रद्धा का भरपूर दोहन किया गया। इसके साथ ही 'आँचल में दूध' लेकर नारी ने मातृत्व का सम्मान तो देख लिया किन्तु 'आँखों में पानी' की सच्चाई भी उसे समझ में आगयी कि वह माँ बनकर केवल समाज को गतिमान रखने का एक साधन मात्र है जबकि जन्म से मृत्यु तक उसकी 'आँखों का पानी' सूखता ही नहीं।

अन्त में, नारी एक माँ, एक बहन, एक पत्नी, एक मित्र और एक बेटी के रूप में समाज और राष्ट्र में महती भूमिका अदा करती है। वह पुरुषवर्चस्ववादी सामाजिक व्यवस्था को खत्म करके लैंगिक भेद रहित समतावादी प्रजातांत्रिक व्यवस्था लाना चाहती है। वह अब किसी भी तरह से धर्म-विधान के अनुसार नहीं, बल्कि राष्ट्र-संविधान के अनुसार जीन-चाहती है। उसे स्वतंत्र आकाश में पंख फैलाने और उड़ने की लालसा है किन्तु उसके पैरों में बेड़ियाँ, आँखों में आँसू, दिल में दर्द और शरीर में लाचारी है। वह तड़पती है, तरसती है स्वतंत्र विचरण करने को, किन्तु पुरुष दरिन्दा उसकी आबरू तार-तार कर देता है, दहेज की वेदी पर भेंट चढ़ा देता है, चेहरे पर तेजाब डाल देता है। घर के ही अपने लोग उसे पैदा होने से पहले ही 'कोख' में मार देते हैं। वह बेचारी जन्म लेने से पहले ही मर जाती है। उसका मुक्त वातावरण में स्वतंत्र उड़ने का सपना भी मर जाता है। क्या नारी का यह सपना कभी पूरा हो सकेगा, इस पर सबको चिन्तन करना है।

इसके लिए सरकार को जनहित में ईमानदारी और प्रमाणिकता से कानून के साथ समूचा सरकारी तंत्र सजग एवं सतर्क बनाना होगा, पुलिस को संवेदनशील रहकर अपराधियों पर दबाव बनाना होगा, मीडिया को समस्या की गहराई में जाकर निष्पक्ष रूप से सच्चाई प्रस्तुत करनी होगी, न्यायालय निष्पक्ष भाव से शीघ्र तथा यथोचित दण्ड दे, और पूरा समाज लोगों में चेतना जगाने का दायित्व ले, तभी 'नारी सशक्तिकरण' आन्दोलन का लक्ष्य पूरा हो सकेगा।

दो बहनों का जुड़वां बहनें बनकर पुनर्जन्म

प्रो. अब्राहम टी. कोवूर

पूरे विश्व के समाचार-पत्रों के रविवारीय अंक 'उपन्यासों से भी अधिक रूचिकर' कहानियों में अनावश्यक रूचि लेते हैं। उनके लिए भूत-प्रेत, पुनर्जन्म, दैवी, इल्हामी भविष्यवाणियां, भूत-प्रेत भगाने के ढंग तरीकों इत्यादि से संबन्धित कथाएं चटपटी एवं मसालेदार चीजें हैं।

'दी सिलोन आब्जरवर' अखबार के 4 अप्रैल 1965 के रविवारीय अंक में एक लेख प्रकाशित हुआ था जिसका लेखक कोई जॉन मैकलिन नामक पत्रकार था। उस लेख में लेखक ने दो जुड़वां बहनों के पुनर्जन्म की कहानी ब्यान की थी। वे जुड़वां बहने 'विटले बे' शहर में रहने वाले पिता जॉन पोलोक एवं माता फ्लोरेंस की बेटियां थी। जुड़वां बहनों में से एक का नाम मिलियन एवं दूसरी का नाम जेनिफर था। वह अपनी बहन मिलियन से दस मिनट छोटी थी। लेखक ने दावा किया है कि मिलियन एवं जेनिफर बहनों की कहानी पुनर्जन्म के सिद्धान्त का समर्थन करने वाले प्रमाणों के क्रम में अत्यन्त शक्तिशाली प्रमाण है।

मई, 1957 में रविवार के दिन ग्यारह वर्षीय जोना एवं उसकी छोटी बहन छह वर्षीय जैकुलिन गिरजाघर जा रही थी। वे उपरोक्त बताए गए जुड़वां बहनों के मां-बाप की बेटियां थी। सड़क के मोड़ पर अचानक आ रही एक कार उन पर चढ़ गई। वे दोनों बुरी तरह से घायल हो गई तथा उनकी मृत्यु हो गई।

इस दुखदायी घटना के 17 महिनों के पश्चात् जॉन पोलोक एवं उसकी पत्नी फ्लोरेंस के घर जुड़वां बच्चियों ने जन्म लिया। उन्होंने उनके नाम मिलियन और जेनिफर रखे। मां-बाप का पूर्ण विश्वास था कि मिलियन एवं जेनिफर 17 मास पूर्व मृतक जोना एवं जैकुलिन ही थी। मिलियन एवं जेनिफर के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ था।

अन्धविश्वासी मां-बाप से जब कुछ पूछा गया कि उनके इस विश्वास का क्या आधार था? तो उन्होंने निम्नलिखित तर्क दियेः-

1. 'जेनिफर की शक्ल-सूरत जैकुलिन के साथ मिलती है। तस्वीरों में उनकी शक्लों की समरूपता साफतौर पर प्रकट होती है। जन्म के समय से ही जेनिफर के माथे पर जख्म का असाधारण चिन्ह है। जैकुलिन एक बार गिर पड़ी थी, उसके माथे पर बिल्कुल ऐसा ही निशान था जोकि गिरने के कारण पड़ा था। जेनिफर की पीठ पर शिलिंग के बराबर भूरा निशान है, जैकुलिन की पीठ पर भी बिल्कुल ऐसा ही निशान था।'

2. 'जैकुलिन बीच वाली दोनों उंगलियों में पैंसिल पकड़ कर लिखा करती थी। अब जेनिफर भी बिना किसी प्रशिक्षण के जैकुलिन की तरह से ही लिखती है।'

3. 'मिलियन कई बातों में जोना की नक्ल करती है। जो वाक्य जोना बोला करती थी, मिलियन भी वही वाक्य बोलती है। जिस प्रकार से जोना चला करती थी, उसी प्रकार से मिलियन चलती है। हमने कभी उसके साथ दुर्घटना के बारे में बात नहीं की परन्तु मिलियन प्रायः उस दुर्घटना के बारे में बातें करने लग जाती है जिसमें वह एवं उसकी बहन मरी थी।'

4. 'जेनिफर ने एक दिन अपनी मां से ड्राईवर के बारे में पूछा, श्रीमान् ...... का क्या बना? क्या उसके दिमाग पर अभी भी दुर्घटना का प्रभाव है?' वह कार चलाने वाले ड्राईवर का नाम बताती है, वह जानती है कि वह कहां रहता था, किस प्रकार की कार चलाता था।'

इस केस में भी अन्धविश्वासी मां-बाप की गवाही के बगैर इसकी निष्पक्ष वैज्ञानिक जांच-पड़ताल की जानी संभव नहीं। मृतक दोनों लड़कियों से

संबंधित बातों की सच्चाई के बारे में जानने के लिए मां-बाप द्वारा बताई गई बातों पर निर्भर होने के सिवा हमारे पास कोई प्रमाण नहीं। फिर इस प्रकार के अन्धविश्वासी मां-बाप की गवाही का क्या मूल्य है जो उनके द्वारा उपरोक्त बताई गई बातों के कारण आंखें मूंद कर यह विश्वास कर रहे हैं कि उनकी बेटियों का पुनर्जन्म हुआ है।

इस कहानी में प्रथम बार यह दावा किया गया है कि पुनर्जन्म के समय पूर्व जन्म के शरीर एवं मन सुरक्षित रहते हैं। यदि यह दावा सत्य है तो आमतौर पर प्रचलित इस विश्वास का क्या आधार है कि एक योनि का जीव दूसरी योनि में जन्म ले सकता है। यदि जीवों के शरीर प्राकृतिक एवं अप्राकृतिक चिन्हों के समेत पुनर्जन्म के समय भी वही रहते हैं तो फिर तालावां केले निवासी तिलकरत्ने के पुरूष गुप्त अंग पुनर्जन्म के समय महिला गुप्त अंगों में कैसे बदल गए जब उसका लड़की के रूप में जन्म हो गया? वह तिलकरत्ने पुरूष से गणतिलेके नाम की लड़की कैसे बन गया? इतिहास में लिखित रिकार्ड में पिछले समय में ऐसी घटना घटने का कोई उदाहरण नहीं मिलता। यदि यह नया दावा सत्य है तो यह भी संभव है कि जब कोई चीता मानव की योनि में उत्पन्न हो, उसकी त्वचा के विचित्र चिन्ह भी चीते के समान ही उसके शरीर पर भी हों।

क्या इन जुड़वां बहनों की अपने पूर्वजन्म की स्मृतियों से संबंधित उनकी अद्‌भुत याददाश्त के बारे में संदेह करने की कोई आवश्यकता है? यदि दोनों बहनों के शरीर मृत्यु एवं गलने-सड़ने के उपरान्त भी पुनः सही सलामत प्रकट हो सकते हैं तो उनकी स्मृतियों के स्वीकार करने में क्या मुश्किल है? यदि शरीर गल-सड़ कर भी कायम रह भी कायम रह सकता है तो क्या स्मृतियां सही सलामत नहीं रह सकती?

छह वर्षो की बच्ची जैकुलिन की दृश्य शक्ति भी अद्‌भुत थी। चाहे मृत्यु उसके सामने खड़ी थी परन्तु वह साधारण बच्चों की तरह से चिल्ला कर भाग जाने के बजाए तीव्र गति से उसकी तरफ आ रही कार से डरने के बजाए ड्राईवर को ध्यान से देख रही थी तथा कार का नम्बर नोट कर रही थी। अब जेनिफर के रूप में पुनर्जन्म लेकर चाहे उसे कार का नम्बर याद नहीं रहा परन्तु उसे ड्राईवर का नाम याद रह गया। वह स्थान भी याद रह गया जहां पूर्व जन्म में वह रहती थी। कितनी विचित्र एवं असाधारण किस्म की बच्ची होगी वह।

चाहे जुड़वां बच्चियां स्वयं यह दावा नहीं करती कि वे पुनर्जन्म लेने वाली जोना एवं जैकुलिन ही हैं परन्तु उन का बाप अत्यन्त तीव्रता के साथ यह बताता है कि जुड़वां लड़कियां उसकी पूर्व मृतक लड़कियां ही हैं तथा अब वे पुनर्जन्म लेकर पुनः पृथ्वी पर आई हैं। वह यह भी कहता है कि लड़कियां किसी दिन मनोचिकित्सक के पास जाएंगी ताकि सम्मोहन के द्वारा वे अपने पूर्व जन्म के बारे में और अधिक जानकारी प्राप्त कर सकें।

क्या यह सम्मोहन के द्वारा दिमागी सफाई करके पुनर्जन्म की कहानी घड़ने की नई कोशिश तो नहीं?

हिन्दी अनुवाद, बलवन्त सिंह प्राध्यापक

सूक्तियां

1. ''इन्सान ईश्वर अथवा देवताओं को अपने जैसा ही कल्पित करते हैं, केवल उनके रूप के मामले में ही नहीं, बल्कि उनके जीवन के अन्दाज में भी।''

(यूनानी दार्शनिक) अरस्तू (384-322 ई.पू.)

2. ''निर्दयी शासक के लिए आवश्कता है कि वह ईश्वर के प्रति अपनी श्रद्धा को बढ़ा चढ़ा कर दिखाए। प्रजा उस शासक के अनुचित कार्यो की कम चिन्ता करती है जिसे वह ईश्वर से डरने वाला धार्मिक शासक समझे। दूसरी ओर लोग उसके विरूद्ध कारवाई करने के लिए भी इतनी जल्दी कदम नहीं उठाते, क्योंकि वे विश्वास करते हैं कि ईश्वर अथवा देवता-गण शासक की पीठ पर हैं।''

अरस्तू (384-322 ई.पू.)

गतांक से आगे–

युग कैसे बदलते हैं?
नरिन्द्र सिंह कपूर के लेख पर टिप्पणी

डा. अमृत

जैसे कि किसी का अत्यंत सुन्दर कथन है कि चाहे रोटी मनुष्य की एकमात्र आवश्यकता नहीं है परन्तु फिर भी अभी तक कोई ऐसा व्यक्ति पृथ्वी पर पैदा नहीं हुआ जोकि रोटी के बगैर जीवित रह सकता हो। भोजन, सिर छुपाने के लिए जगह तथा जलवायु की मार से स्वयं को बचाने के लिए प्रबंध करना मानव की प्रारम्भिक आवश्यकताएं हैं। वह इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए परिश्रम करता है अर्थात् प्रकृति से कच्चा माल लेकर अपने औजारों की मदद से उसे अपने इस्तेमाल के योग्य बनाता है। मानव की इस गतिविधि को उत्पादन कहते हैं। उत्पादन के लिए एवं उत्पादन के दौरान मानव अपने जैसे अन्य मनुष्यों के साथ मेल–जोल कायम करता है तथा संबंध स्थापित करता है जिसे उत्पादन के संबंध कहा जाता है। उत्पादन के संबंधों में सबसे अहम् उत्पादन के साधनों (कच्चा माल, जमीन, जल के स्रोत, कारखाने, उद्योग इत्यादि) का स्वामित्व होता है। मानव जिस शक्ति का प्रयोग करके प्रकृति पर विजय प्राप्त करने एवं अपने अनुसार ढालने की कोशिश करता है, उस शक्ति को उत्पादक शक्तियां कहा जाता है। उत्पादक शक्तियों में मानव स्वयं एवं उसके औज़ार शामिल होते हैं। उत्पादक शक्तियों का प्रत्येक विकास जिस में मानव द्वारा प्रयोग में लाए जाते औज़ारों का विकास एवं मानव का स्वयं का विकास शामिल है। मानव के प्रकृति के साथ संघर्ष में मनुष्य का पक्ष मजबूत करता चला जाता है तथा मानव प्रकृति के साथ संघर्ष के दौरान उत्पादक शक्तियों को और भी बेहतर से बेहतर बनाता चला जाता है। इस प्रकार मानव प्रकृति के साथ अपने संघर्ष में अपनी दशा को अधिक से अधिक मजबूत एवं आसान बनाने के लिए अपने औजारों को एवं स्वयं को भी विकसित करता चला जाता है। जब तक सामूहिक स्वामित्व इस विकास को बढ़ावा देता था तब तक सामूहिक स्वामित्व वाला समाज कायम रहा, जब वह उत्पादक शक्तियों के और आगे विकास के अनुकूल न रहा तो वह टूटना शुरू हो गया, जिस का परिणाम वर्ग रहित प्रारम्भिक समाज वर्गों में बंटे समाज में परिवर्तन हो जाने के रूप में निकला। इन नये प्रकार के समाजों में सामूहिक स्वामित्व का स्थान निजी स्वामित्व ने ले लिया तथा सभी मनुष्यों के कार्य करने के स्थान पर समाज का एक वर्ग काम करता तथा वही वर्ग इतना कुछ पैदा कर देता कि इस से काम न करने वालों का भी गुजारा होने लगा। (यह काम न करने वाला वर्ग उत्पादन के साधनों का स्वामी था) परिणामस्वरूप मानवता के एक वर्ग के पास खाली समय रहने लगा। इस खाली समय का मानवता के कुछ हिस्से ने दर्शन, विचारधारा, साहित्य, कला, विज्ञान एवं राजनीति इत्यादि के विकास के लिए प्रयोग किया। क्योंकि मानसिक कार्य मुख्य तौर पर शासक वर्ग अथवा उसकी छत्र छाया में कार्य करने वालों द्वारा किया जाता है, इसलिए साहित्य, कला, विज्ञान, राजनीति, दर्शन, विचारधारा का प्रयोग भी शासक वर्ग द्वारा शोषित वर्ग पर अपनी पकड़ मजबूत करने के लिए किया जाता है। शासक वर्ग राजसत्ता के रूप में संगठित होता है जो शोषितों को दबा कर रखने एवं नियंत्रण करने का साधन बन जाता है। दर्शन, विचारधारा, साहित्य, कला, विज्ञान एवं राजनीति तथा राजसत्ता का रूप कैसा होता है, यह शासक वर्ग कौन है उससे तय होता है जो आगे चल कर समाज के आर्थिक आधार से तय होता है जिसकी बुनियाद में उत्पादक संबंधों एवं

उत्पादक शक्तियों की परस्पर अन्तर-क्रिया होती है। जितनी देर वर्ग आधारित समाज रहता है, ऐसा ही होता रहता है।

प्रथम वर्ग आधारित समाज दास प्रथा वाला समाज था। जितनी देर दास प्रथा के समाज के उत्पादक शक्तियों के आगामी विकास के अनुकूल रहे, यह कायम रहा तथा जब यह संबंध बाधा बनने लगे तो इसका स्थान सामन्तवादी उत्पादन संबंधों ने ले लिया जो आगे चलकर इसी कारण पूंजीवादी उत्पादन संबंधों में बदल गए। अब समाज ऐसे पड़ाव पर आ पहुंचा है जब उत्पादन के साधनों का निजी स्वामित्व उत्पादक शक्तियों के आगामी विकास में बाधा बन चुका है। इसलिए निजी स्वामित्व का खात्मा करके सामूहिक स्वामित्व के पुनः स्थापित होने का पड़ाव आ गया है, परन्तु यह आदिम साम्यवादी समाज के सामूहिक स्वामित्व से अत्यंत ऊंचे धरातल पर होगा। परन्तु उत्पादक शक्तियों एवं उत्पादन संबंधों की यह परस्पर अंतः क्रिया समाज में कैसे प्रकट होती है? वर्गो में बंटे समाज में यह प्रकटावा शासक वर्ग तथा शोषित वर्ग उदाहरण स्वरूप दास प्रथा वाले समाज में दास-स्वामियों एवं दासों के मध्य संघर्ष के रूप में, सामन्तवादी समाज में सामन्ती वर्ग एवं उभर रहे पूंजीपति वर्ग एवं किसानों के गठजोड़ के दरम्यान संघर्ष के रूप में तथा पूंजीवादी समाज में पूंजीपतियों एवं श्रमिक वर्ग के दरम्यान संघर्ष के रूप में सामने आता है। यह संघर्ष सीधि लड़ाई के रूप में फूटने से पूर्व राजनैतिक, विचारधारक दर्शन, कला, साहित्य एवं विज्ञान के क्षेत्र में लड़ा जाता है। इस संघर्ष का परिणाम या तो नये उत्पादन संबंधों का प्रतिनिधित्व करने वाले वर्ग की विजय के रूप में सामने आता है तथा उत्पादक शक्तियों के और आगे विकास के लिए रास्ता खुल जाता है। कई बार पुराने उत्पादक संबंधों में हित रखने वाला वर्ग जीत जाता है तथा नये-पुराने के संघर्ष के नये चक्कर के आरम्भ होने तक ऐसा समाज यथास्थिति का शिकार हो जाता है। अंत में परिणाम या तो नये की जीत में निकलता है अथवा दोनों वर्गो की बर्बादी एवं समाज के पतन के रूप में निकलता है। कार्ल मार्क्स द्वारा दिया गया ऐतिहासिक पदार्थवाद का सिद्धांत संक्षेप में यही है।

इस प्रकार हमें उन सवालों के जवाब मिलते हैं जोकि मानव समाज की घटनाओं के केवल लिख देने से नहीं मिलते। हमें पता चलता है कि इतिहास की चालक शक्ति मनुष्य का प्रकृति के साथ लगातार जारी रहने वाला संघर्ष है जो वर्ग-विहीन समाज में बिल्कुल प्रत्यक्ष दिखाई देता है परन्तु वर्गो में बंटे हुए समाज में मनुष्य एवं प्रकृति के संघर्ष पर वर्गों के परस्पर संघर्ष का पर्दा पड़ जाता है। वर्ग आधारित समाज में मनुष्य एवं प्रकृति के दरम्यान संघर्ष में मानव तब ही आगे बढ़ सकता है यदि वह वर्ग-संघर्ष में भाग लेता है तथा इस संघर्ष में समाज को विकास के नये एवं ऊंचे धरातल पर ले जाने में समर्थ वर्ग विजयी होकर निकलता है। इस प्रकार खुद मानवी लोक समूह हैं जोकि अपना इतिहास बनाते हैं न कि कुछ व्यक्ति अथवा कोई बाह्य शक्ति। यह सभी कुछ उत्पादन के संबंधों एवं उत्पादक शक्तियों की अन्तः क्रिया के दायरे के अन्दर रहकर होता है। इस प्रकार हमें वह नियम भी मिल जाता है जो मानवी इतिहास को दिशा देता है। उत्पादन के संबंधों एवं उत्पादक शक्तियों का परस्पर सुर-मेल तथा उत्पादक शक्तियों का विकास-उत्पादन के संबंधों एवं उत्पादक शक्तियों में विरोध-उत्पादक संबंधों में परिवर्तन तथा नये एवं ऊँचे धरातल पर उत्पादन के संबंधों एवं उत्पादक शक्तियों में नया सुर-मेल, उत्पादक शक्तियों में पुनः विरोध यह वह नियम हे जिस के दायरे में मानव समाज आगे विकास करता है तथा यह मानव की इच्छा से स्वतंत्र है। इस प्रकार मार्क्स का सिद्धांत मानवता को अपने इतिहास की एकसार समझ की जानकारी देता है, उसे इतिहास को आगे ले जाने वाली चालक शक्तियों के बारे में बताता हे तथा इतिहास

के विकास के नियम बताता है जिसे अब सचेत तौर पर प्रयोग करके अपने विकास को दिशा दे सकता है।

मानव इतिहास के बारे में इतनी सी जानकारी के पश्चात् अब हम एक बार फिर से कपूर साहब के इतिहास के बंटवारे की ओर चलते हैं। उनकी विधि में सब से बड़ी कमी यह है कि यह मानवी इतिहास के अत्यंत अहम् पड़ावों को गोल कर जाता है। जैसे कि वर्तमान मानव समाज वर्गों में बंटा हुआ समाज है। ये वर्ग किस प्रकार एवं किस समय मानव समाज में अस्तित्व में आए तथा मानव समाज कब वर्गो में बंट गया, इस बाबत कपूर साहब का सिद्धांत बिल्कुल ही चुप है। वर्ग संघर्ष की तो बात ही क्या करनी थी। दूसरे, यह विधि मनुष्यों के परस्पर संबंधों की कोई बात नहीं करती जिस के कारण किसी भी मानवी समाज के आर्थिक ढांचे का अध्ययन करने के बिल्कुल भी योग्य नहीं है। जैसे कि उनका ''कृषि युग'' 11800 वर्ष तक जारी रहता है, परन्तु क्योंकि उनके अनुसार यह संपूर्ण युग पशुबल पर आधारित था इसलिए इसमें कोई बड़े स्मरणीय परिवर्तन नहीं आए। जबकि इतिहास का अध्ययन इस बात को जड़ से ही रद्द करता है जो हमें बताता है कि इस समय के दौरान मानव कितने दौरों में से गुजरा तथा विकसित हुआ। परन्तु क्योंकि कपूर साहब के लिए पशू-बल एवं कृषि युग से परे कुछ है ही नहीं, इसलिए वे इन बदलावों से इनकारी हो जाते हैं। इसी प्रकार का कुछ वे औद्योगिक युग की बात करते समय करते हैं। उनके लिए अपना ''मकैनिकी बल'' का जुमला तथा ''औद्योगिक युग'' ही सब कुछ है, नतीजा उन्हें इस युग जिसे सही ढंग से संबोधित हुआ जाए तो पूंजीवादी युग कहा जाना चाहिए, में वर्ग-संघर्ष बिल्कुल भी दृष्टिगोचर नहीं होता। उनकी भविष्य की दिशा है सौर उर्जा के प्रयोग का युग, परन्तु इससे औद्योगिक युग बदल कर कोई नया युग शुरू होगा अथवा यही युग जारी रहेगा, इस बाबत वे फिर से चुप हैं। वास्तव में वे चुप होने के अलावा कुछ कर भी नहीं सकते। क्योंकि उनकी पूरी विधि ही गैर-ऐतिहासिक तथा गैर वैज्ञानिक है। इसलिए भविष्य की दिशा को समझना उनके बस की बात है ही नहीं। सौर-उर्जा की उर्जा के मुख्य स्रोत के तौर पर कृषि (इसमें पशुपालन एवं मछली पालन शामिल हैं) तथा उद्योग से बगैर और कौन सा उत्पादन का क्षेत्र पैदा होगा, यह तो कपूर साहब ही जाने, क्योंकि इन दो क्षेत्रों के बिना (यदि हम प्रारम्भिक शिकार के ढंग को छोड़ दें) उत्पादन का अन्य कोई क्षेत्र आज तक कोई वैज्ञानिक बता नहीं सका। शायद वह अपने बहुत से बुद्धिमान सहयोगियों की तरह से 'सेवा क्षेत्र' अथवा 'मानसिक श्रम' के क्षेत्र जैसा कुछ सुझाएं, परन्तु सेवा क्षेत्र उद्योग की बुनियाद पर खड़ा है तथा उद्योग के बिना इसका कोई अस्तित्व नहीं हो सकता। 'मानसिक श्रम' का क्षेत्र मानव के साथ बहुत समय पहले से ही जुड़ चुका है तथा कुछ भी उत्पादन किये बगैर निरोल 'मानसिक श्रम' सम्भव नहीं है। हां यह हो सकता है कि उन्हें यह सपना आया हो कि सौर उर्जा के युग में मनुष्य कुछ उत्पादन करने के स्थान पर धूप में बैठा करेंगे क्योंकि उनके शरीर को किसी खुराक की आवश्यकता नहीं रहेगी, वे तो बस अपनी बैटरियां ''चार्ज करके चिंतन करने के लिए बैठ जाया करेंगे! परन्तु यहां फिर से एक सवाल खड़ा हो जाता है कि मानव का चिंतन तो उसकी उत्पादन सरगर्मी से जुड़ा हुआ है, फिर जब उत्पादन ही नहीं होगा तो चिंतन कैसे होगा अथवा क्या होगा!

उनके द्वारा ''मकैनिकी बल'' के शब्दों का अत्यंत अधकचरे ढंग से तथा भौतिकी विज्ञान से अनजान व्यक्ति की तरह से प्रयोग किया गया है। मानव जब अपने शारीरिक बल के औज़ारों को गति में ला कर कुछ काटता था अथवा जानवरों को मारने के लिए औज़ारों का प्रयोग करता था, उस समय भी ''मकैनिकी बल'' को ही प्रयोग में ला रहा होता था। उस समय मनुष्य की मांसपेशियों

में मौजूद खुराकी तत्व रासायनिक क्रियाओं के द्वारा मांसपेशियों में हरकत पैदा कर रहे होते थे। (आज के मनुष्य में ये क्रियाएं वैसे ही होती हैं) तथा इस हरकत से पैदा हुआ बल मकैनिकी बल अथवा यान्त्रिक बल ही होता था। पशुओं के मामले में भी यह ही लागू होता है। इसलिए यह कहना कि ''मकैनिकी बल'' औद्योगिक युग की कोई अलग विशेषता है, एक अर्धसत्य है। दूसरा, कृषि के आरम्भ का मानव द्वारा पशुबल के प्रयोग के साथ बिल्कुल भी संबंध नहीं है। कृषि में पशुओं का प्रयोग काफी बाद में जाकर आरम्भ हुआ जब लकड़ी के हल की खोज हुई तथा यह 3500ई.पू. के लगभग मैसोपोटामिया एवं पोलैंड में लगभग एक ही समय में हुआ। वैसे उर्जा की किस्मों की बात करते हुए कपूर साहब ने ताप उर्जा (अग्नि के रूप में) के मानव द्वारा प्रयोग को युग पलटाऊ घटनाओं में गिनना पता नहीं क्यों जरूरी नहीं समझा! (शायद यह उनके चौखटे में रूकावट बन रहा था!) उनके अनुसार कृषि युग के पश्चात् औद्योगिक युग आता है, अर्थात् 1000ई.पू. से लेकर 18वीं शताब्दी तक यही युग रहा। मानव समाज एक घुमन्तु कबीलों से टिक कर रहने वाले कबीलों में, फिर समाज में कई प्रकार के श्रम के बंटवारे का पैदा होना, समाज का वर्गो में बंट जाना तथा राज्य की उत्पत्ति होना, समाज का दास युग एवं सामान्तवादी समाज के पड़ावों में से गुजरते हुए पूंजीवादी दौर में दाखिल होना, यह सब कपूर साहब के लिए कोई युग पलटाऊ घटनाएं तो छोड़ो, 'पहचान योग्य' घटनाएं भी नहीं हैं!! वे अपनी उर्जा ध्योरी में इतना उलझ जाते हैं कि इस बेतुके नतीजे पर जा पहुंचते हैं- ''19वीं सदी के आधे भाग तक संसार में अमीरी-गरीबी की खाई नहीं थी। यह खाई औद्योगिक युग एवं पूंजीवादी व्यवस्था की देन है।'' यह है कपूर साहब का मानव-समाज के इतिहास का ज्ञान, ऐसा लगता है कि जैसे किसी ने अभी-अभी बोलना सीखा हो तथा इसी चाव में जो भी मुंह में आया बोल दिया, क्योंकि एक विद्वान व्यक्ति, विश्वविद्यालय में से प्रोफैसर रिटायर हुआ व्यक्ति ऐसी बेतुकी बात भूल कर भी नहीं लिख सकता। एक अन्य स्थान पर वे लिखते हैं- ''...औद्योगिक युग विज्ञान एवं मानव केन्द्रित समाज है।'' औद्योगिक युग जो वास्तव में पूंजीवादी समाज है, न तो विज्ञान केन्द्रित है तथा न ही मानव केन्द्रित है। इस का केन्द्र बिन्दु एक ही है- मुनाफा तथा और अधिक मुनाफा। इसलिए वह विज्ञान का इस्तेमाल करता है तथा इसी कारण वह विज्ञान का विकास करता है तथा जहां विज्ञान के विकास से पूजीवादियों के मुनाफे पर चोट पहुंचती है, विज्ञान का विकास भी रूक जाता है। विज्ञान को जन-साधारण तक लेकर जाना तथा उन्हं शिक्षित नागरिक बनाना पूंजीवाद का कभी भी तकसद नहीं रहा। मानव तो इस व्यवस्था की किसी भी गिनती में है ही नहीं। ८० प्रतिशत आबादी की बदहाल जिन्दगी, लगातार चलते रहने वाले युद्ध एवं भयंकर तबाही तथा अनेकों लोगों की बलि, परमाणु युद्ध का खतरा तथा अब ग्लोबल वार्मिंग एवं वातावरण की तबाही के कारण मानवता एवं पृथ्वी की सलामती को ही उत्पन्न हुआ खतरा, यह सब कुछ है जो पूंजीवाद के पास आज के समय में मानवता को देने के लिए है। परन्तु यह सभी कुछ लेखक को दिखाई ही नहीं दिया क्योंकि वे तो ''औद्योगिक युग'' एवं ''मैनिकी बल'' जैसे जुमलों से आगे आंखें बंद कर लेते हैं। इस प्रकार लेखक पूर्णतः पूंजीवाद के चाटुकार बुद्धिजीवियों द्वारा पूंजीवाद को एक आदर्श बना कर पेश करने के लगातार चलते प्रापेगण्डे का शिकार हैं। लेख के अन्त में वे लिखते हैं- ''सौर उर्जा से विकास अच्छा बढ़िया एवं प्रदूषण रहित होगा।'' परन्तु अमीरी-गरीबी रहेगी अथवा नहीं, वर्ग रहेंगे अथवा नहीं, मानव के हाथों मानव की लूट रहेगी अथवा नहीं, मुट्ठी भर अमीरों की बहुसंख्यक श्रमिक गरीबों पर तानाशाही रहेगी अथवा नहीं, इन प्रश्नों का जो बहुसंख्यक जनता के प्रश्न हैं, का उत्तर देने के

बजाए पाठकों के हाथों में झुन-झुना पकड़ा दिया जाता है- ''सौर उर्जा से विकास अच्छा बढ़िया एवं प्रदूषण रहित होगा।'' वे यह भी लिखते हैं- ''विश्व स्तर पर परिवर्तन के ये चिन्ह आस-पास उभरने लग पड़े हैं, ''ये कौन से चिन्ह हैं, कोई पता नहीं। सौर उर्जा का प्रयोग पूंजीवादी भी करेंगे, बस इसके प्रयोग से तेल एवं कोयले की अपेक्षा मुनाफा अधिक हो। सब से बड़ी बात तो यह है कि सौर उर्जा द्वारा युग कैसे बदल जाएगा, यह रहस्य पूरे लेख में बना रहता है। अपना उपदेश जारी रखते हुए वे लिखते हैं- ''एशियाई देशों में धूप की भरमार है। इसलिए इस सदी को एशियाई सदी कहा जाता है।'' अर्थात् सौर उर्जा का युग इसी सदी में आएगा। खैर, धूप की भरमार तो लगभग उन सभी देशों में है, जो कर्क रेखा एवं मकर रेखा के मध्य में आते हैं, फिर यह सदी एशियाई देशों की ही क्यों है ? इस प्रकार वे या तो अत्यंत भोले-भाले हैं अथवा इतिहास के पक्ष से बिल्कुल ही अनजान हैं, अथवा वे जानबूझ कर तथ्यों को तोड-मरोड़ रहे हैं, परन्तु कुछ भी हो उनकी इस बौद्धिक कसरत का क्या निकलता है ? क्योंकि इतिहास में किसी की नीयत नहीं, बल्कि उसके द्वारा किए गए कार्यो का नतीजा क्या निकलता है, यह ज्यादा महत्वपूर्ण होता है, तथा नतीजा चाहे वे चाहें अथवा न चाहें, यह निकलता है कि वे समाज में वर्गों के अस्तित्व को नकार रहे हैं, मिथ्या सिद्धांत घड़ कर समाज के ऐतिहासिक पड़ावों के बारे में गलत धारणाएं फैला रहे हैं तथा समाज के भविष्य की दिशा एवं वर्तमान पूंजीवादी ढांचे के ध्वस्त हो जाने को नकार रहे हैं, अर्थात् समस्त मानवता की बेहतरी को मानने से इनकारी हैं। वर्तमान पूंजीवादी लुटेरी व्यवस्था उनके लिए मानवता का सर्वोच्च पड़ाव है। सारांश में कहा जाए तो वे पूंजीवादी की बहुत खूब सेवा कर रहे हैं।

अब श्री कपूर के लेख में अन्य कई नुक्तों पर बात करते हैं। उनके लेख की प्रथम पंक्ति है- ''युग वहीं बदलते हैं, जहां युग को बदलने वाले ज्ञानवान हिम्मती व्यक्ति उपजते हैं।'' लेख के अन्दर भी उनकी इस प्रकार की टिप्पणियां आती हैं जिन से स्पष्ट होता है कि लेखक मानव इतिहास को बदलने के वाहक के रूप में कुछेक व्यक्तियों की अथवा कहा जाए तो नायकों की भूमिका को ही प्रमुख मानते हैं, शेष मानव समाज उनके लिए सुस्त, आलसी भीड़ से अधिक कुछ भी नहीं। इतिहास में नायकों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है, परन्तु यह सब कुछ नहीं होती। जैसे सैनिकों के बगैर सेनापति कोई युद्ध नहीं लड़ सकते तथा योग्य सेनापति के बगैर कोई सेना युद्ध जीत नहीं सकती अर्थात् सेनापति एवं आम सैनिक एक दूसरे के पूरक हैं। परन्तु जन-समूहों के बगैर कोई सेनापति अपनी सेना तैयार नहीं कर सकता चाहे वह कितना भी बुद्धिमान न हो, परन्तु जन-समूह बगैर सेनापति के भी लड़ सकते हैं तथा अपनी लड़ाई के दौरान अपने सेनापति अपने में से ही पैदा कर लेते हैं। इस प्रकार सबसे महत्वपूर्ण किसी समाज के जनसमूह होते हैं, ये जन-समूह ही समाज को बदलने के वास्तविक वाहक होते हैं। नायक भी अपनी प्रतिभा तब ही विकसित कर पाता है यदि उसके लिए बहुत सा कार्य उसके समाज के अन्य लोग करते हों, तथा प्रतिफल के रूप में वह अपनी प्रतिभा को लोगों की बेहतरी के लिए लगाता है। नायक को नायक लोग बनाते हैं, न कि वह स्वयं को नायक घोषित करता है। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह भी है कि नायक का संकल्प भी समाज के वर्गों में बंट जाने से अस्तित्व में आता है। आदिम समाज में जब जीवित रहने के लिए सभी को ही समान रूप से श्रम करना पड़ता था तो नायक के संकल्प का पैदा होना ही संभव नहीं था। तब सारा कबीला ही प्रत्येक चीज का सामूहिक स्वामी होता था। समेत ज्ञान के। आजकल एक अन्य ''फैशन'' भी है जिसके अनुसार भी समाज बदलने में कुछ व्यक्तियों की भूमिका ही मुख्य होती है तथा भीड़ आलसी, सुस्त एवं परिवर्तन विरोधी होती है

परन्तु नायक के संकल्प से अन्तर यह है कि यहां कुछ व्यक्ति निकम्मे, निठल्ले एवं समाज से टूटे बुद्धिजीवि होते हैं जो स्वयं को नायकों की जगह पर रखने लगते हैं। ये बुद्धिजीवी कुछेक पुस्तकें पढ़कर, कुछेक इधर-उधर से सुन कर तथा शेष अपनी लेखनकला एवं भाषणकला का विकास करके यह समझने लगते हैं कि लोगों का कर्तव्य है कि वे ''विद्वानों की सुनें, विद्वानों से बहस न करें, इन किताबी नायकों के उपदेश सुनें तथा लड़ें खुद खुद, इनको आराम से अपने बड़े घरों में रहने दें तथा प्रातः व सायंकाल को आकर दिशा-निर्देश ले जाया करें। जब लोग जो प्रायः अपने जीवन के लिए बड़े-छोटे संघर्षों में लगे रहते हैं, इन किताबी नायकों की अगुवाई मानने से इनकार कर देते हैं तो ऐसे बुद्धिजीवि जनसाधारण को सुस्त, आलसी एवं परिवर्तन विरोधी कह कर फिटकारना शुरू कर देते हैं तथा कुछ व्यक्तियों की मुख्य भूमिका का अपना राग अलापते रहते हैं जब तक कि उनको समय का वेग बहा कर किसी अंधेरे कोने में नहीं फैंक देता। ऐसे किताबी नायकों की समाज को बदलने में लगभग शून्य भूमिका होती है।

वैसे तो उनका पूरा लेख, लेख का प्रत्येक पैरा ही बेतुकी एवं गैर-ऐतिहासिक टिप्पणियों से भरा पड़ा है। यदि प्रत्येक ऐसी टिप्पणी पर बात करने लगें तो शायद एक पुस्तक ही लिखनी पड़े। फिर भी कुछ प्रमुख बातों पर संक्षेप में कुछ बातचीत करना प्रासंगिक होगा। उनके लेख के प्रथम तीन पैरे अंधी पश्चिम भक्ति से परिपूर्ण हैं। उन्हें ऐसा लगता है जैसे प्रत्येक चीज एवं मानवता का प्रत्येक विकास यूरोप एवं वह भी यूनान एवं रोम में ही हुआ हो तथा शेष पूरा विश्व उनके आगे भिखारी से बढ़कर कुछ न हो। प्रायः चीजों का स्तही मूल्यांकन करने वालों का यही हाल होता है। यदि हमारे पंजाब का कोई कलाकार अथवा साधारण व्यक्ति विदेश का एकाध चककर लगा आए तो वह भी इसी प्रकार अमेरिका-कनाडा-इंग्लैंड का गुणगान करता है, निश्चय ही यह बीमारी बुद्धिजीवी वर्ग में जड़ें जमाकर बैठी हुई है तथा उनमें यह बहुत पुरानी है, यह अंग्रेजों की 250 वर्ष की गुलामी की हमारे दिमागों में पड़ी काली परछाई है। वे देश सम्पन्न हैं, इस कारण नहीं कि उन्होंने अपने दम पर यह सम्पन्नता हासिल की है, बल्कि इस कारण कि इसमें आयरलैंड के किसानों का खून मिला हुआ है, अफ्रीका के गुलाम बना गए नीग्रो लोगों के खून की बूंदे टपकी हुई हैं, एशिया एवं लैटिन अमेरिका के गुलाम देशों के निवासियों की सदियों तक चली लूट शामिल है तथा अमेरिका के रैंड इन्डियों का कत्लेआम बोलता है और आज भी पूरी दुनिया की इन मुट्ठी भर देशों द्वारा की जा रही आर्थिक लूट शामिल है। कोई कह सकता है कि यह भी तो उन्होंने अपना विकास पहले करके तथा अन्य देशों को पछाड़ कर हासिल किया है। बिल्कुल ठीक, परन्तु इसलिए उन्हें महान कहना तथा उन देशों का गुणगान करना सर्वथा उचित नहीं। हां उन देशों की विरासत में जो कुछ मानवता के पक्षधर हैं (तथा ऐसा थोड़ा नहीं है।), वह सभी की साझा विरासत है। अब यह देखें कि क्या प्रत्येक वस्तु यूरोप से पैदा हुई है जैसा कि श्री कपूर साहब का कथन है? कृषि का प्रारम्भ मिश्र, भारत, चीन में पहले हुआ तथा यहां से वह यूरोप में फैली। वास्तव में प्रारम्भिक सभ्यताएं जो अपने समय में अत्यंत ऊंचे विकास के स्तर पर थी, वे सभी यूनान एवं रोम के उदय से पूर्व स्थापित हुई।

सूक्तियां

''लोगों के हुजूम प्रायः बे-उसूले होते हैं, बेकाबू इच्छाओं वाले जज़्बाती एवं नतीजों से बेपरवाह, उनको अनुशासन में रखने के लिए आवश्यक है कि भय से भर दिया जाए। पुरातन लोगों ने अत्यन्त चतुराई की। इसके लिए ईश्वर का अविष्कार किया तथा मृत्योपरांत मिलने वाले दण्ड का भय उत्पन्न किया।''

पोलिवियस (203-120 ई.पू.)
(यूनानी इतिहासकार)

जीवन का सच

धर्म ने मानव जाति को समय-समय पर चोट पहुँचाया है लेकिन संसार के आम जनता को यह बात मालूम नहीं है। जिस दिन आम-आवाम को यह सच मालूम होगा उसी दिन से वह मानवतावाद को अपनायेगा। जीवन का सच सामने लाने के लिए धर्म युद्ध (क्रूसेड)का इतिहास भी जानना होगा।

धर्म युद्ध एक सैनिक अभियान था जो यूरोप के ईसाईयों द्वारा ग्यारहवीं सदी से तेरहवीं सदी के बीच मुसलमानों के विरूद्ध फिलिस्तीन की स्वतंत्रता के लिए लड़ा गया था। जेरूसलम ईसाईयों का पवित्र स्थान था। वे युद्ध के माध्यम से जेरूसलम को वापस लौटाना चाहते थे।

1071 ई० में जेरूसलम पर तुर्की ने अधिकार कर ईसाईयों पर अत्याचार प्रारंभ कर दिया। वे ईसाईयों के घरों को लूट लेते थे और तलवार के बल पर इस्लाम धर्म स्वीकार करवाना चाहते थे। ईसाईयों को पर्व मनाने की स्वतन्त्रता से वंचित कर दिया गया था। जेरूसलम की तीर्थयात्रा करने वाले ईसाईयों को अपमानित किया जाता था। तुर्को ने कुस्तुनतुनिया पर आक्रमण करने की धमकी दी। कुस्तुनतुनियों के शासक ने ईसाईयों की रक्षा के लिए पोप अर्बन द्वितीय और पश्चिम के ईसाई देशों से सहायता की माँग की। ईसाई धर्म प्रचार के नाम पर पोप अर्बन द्वितीय ने प्रेरणा दी। कुछ प्रमुख धर्मयुद्ध इस प्रकार हैं-

(1) प्रथम धर्मयुद्ध (1096-1099) प्रथम धर्मयुद्ध पोप अर्बन द्वितीय के आह्वान से प्रेरित होकर पीटर हरमिट के नेतृत्व में 70,000 धर्मयोद्धाओं द्वारा जेरूसलम पर अधिकर करने के उद्देश्य से शुरू हुआ। धर्म योद्धाओं ने कुस्तुनतुनिया की लूट-पाट की। तुर्को ने धर्म योद्धाओं की हत्या कर आक्रमण विफल कर दिया। फ्रांस, जर्मीनी और ईटली के शासकों की सेना गॉडसे के नेतृत्व में 15 जुलाई 1099 ई० में सीरिया के एडेस्सा और एंटीओके के साथ जेरूसलम पर अधिकार कर लिया। इस विजय के उपलक्ष्य में मुसलमानों और यहूदियों की निर्मम हत्या कर गॉडफ्रे को जेरूसलम का शासक तथा सीरिया-फिलितीन के जीते हुए क्षेत्र में चार राज्यों की स्थापना की गयी।

प्रथम धर्मयुद्ध की सफलता अधिक दिनों तक स्थायी नहीं रही। आगे चलकर विभाजित परिस्थिति का लाभ उठाकर तुर्को ने 1147 में एडेस्सा पर अधिकार कर लिया। अतः पोप ने दूसरे धर्मयुद्धों की घोषणा कर दी।

(2) दूसरा धर्म युद्ध (1145-1149) एडेस्सा पर तुर्को के अधिपत्य ने यूरोपीय शासकों को उत्तेजित कर दिया। फ्रांस का सम्राट लुईस सप्तम युद्ध के लिए तैयार नहीं था। जर्मनी का सम्राट कोनराड तृतीय अपनी विशाल सेना के साथ एशिया माईनर की तरफ से आगे बढ़ा। पूर्वी क्षेत्र से सम्राट मेनुअल कोमनेनस की सेना साथ हो लीं लुई की सेना दूसरे वर्ष साथ देने के लिए पहुँची। राउम के पहाड़ी क्षेत्र में फ्रांस की सेना का बहुत बड़ा भाग नष्ट हो गया। दमिश्क पर आक्रमण विफल रहा। पराजय के बाद कुछ ही सैनिक फ्रांस लौट सके। इसी बीच सलाद्दीन (1137-1193) ने मिस्त्र में फातिमी सत्ता पर कब्जा करने के बाद सीरिया पर भी अधिकार कर लिया। सलाद्दीन ने ईसाईयों के विरूध युद्ध की घोषणा कर दी। 1187 ई० में जेरूसलम, ऐंटी ऑक ट्रीपोलिस तथा टायर पर अधिकार कर लिया। फलतः सलाद्दीन के विरूद्ध ईसाईयों ने तीसरे धर्मयुद्ध का शंखनाद किया।

(3) तृतीय धर्मयुद्ध (1189-1192) सलाद्दीन के साथ लोहा लेने के लिए यूरोप के चर्च, सम्राटों और सरदारों के बीच एक अजीब ढंग का जोश अमड़ पड़ा। परन्तु वे संगठित होकर आक्रमण नहीं कर पाये। जर्मनी का शासक बारबरोसां पहल कर 1189 में एशिया माईनर को पार कर जेरूसलम पर अधिकार करना चाहा। परन्तु एक नदी को पार करने में स्वयं डुबकर मर गया। फिर भी उक्रे पर

ईसाईयों का अधिकार हो गया। परन्तु यूरोपीय शासकों को अन्ततः 1192 ई0 में सलाद्दीन के साथ समझौता करने के लिए राजी होना पड़ा। समझौते के अनुसार जेरूसलम एवं फिलिस्तीन पर तुर्कों का अधिकार पूर्ववत बना रहा और कुछ बन्दरगाहों पर ईसाईयों को बसने की सुविधा दी गई। यूरोप के ईसाईयों को जेरूसलम की यात्रा करने की छूट दी गई और उन्हें कर से मुक्त कर दिया गया।

तृतीय धर्मयुद्ध के बाद भी धार्मिक स्थानों पर नियंत्रण कायम करने के लिए युद्ध होता रहा।
(4) बच्चों का धर्मयुद्ध (चौथा धर्म युद्ध) 1202 ई0 में हुआ था लेकिन इसमें ईसाईयों को कोई विशेष सफलता नहीं मिली थी। ऐसी स्थिति में स्टीफेन नायक एक बालक के नेतृत्व में 30 हजार बच्चों की सेना ने मुसलमानों के खिलाफ जेरूसलम की ओर प्रस्थान किया। बीस हजार बालक सैनिकों की एक सेना ने निकोलस के नेतृत्व में प्रस्थान किया। दुर्भाग्य से आधे से अधिक बच्चे रास्ते में ही मर गये। शेष बच्चों को तुर्कों का गुलाम बना लिया गया। इस प्रकार यह धर्मयुद्ध भी असफल हो गया। 1291 ई0 में मिस्त्र के मामलुक शासकों ने धर्मयुद्ध करने वाले सभी ईसाईयों को फिलिस्तीन से बाहर कर दिया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सर्वप्रथम धर्म की रक्षा के नाम पर ईसाईयों का भीषण नरसंहार हुआ। प्रायद्वीप हत्या की घटनाओं का प्रमुख केन्द्र बन गया चूँकि धर्मयुद्ध पोप के आह्वान पर प्रारंभ किया गया था। इसलिए पोप की शक्ति और प्रभाव में आशातीत वृद्धि हुई। धर्म की रक्षा के नाम पर ईसाईयों ने दिलखोलकर चर्च को दान दिया था। जिस कारण चर्च भ्रष्टाचार का केन्द्र बन गया। धर्मयुद्धों के कारण यूरोपीय राज्यों एवं मुसलमानों के बीच कटुता बढ़ती चली गयी। धर्मयुद्ध की कड़ी को अब हम तीस वर्षीय युद्ध से जोड़कर देखेंगे।

तीस वर्षीय युद्ध :- यूरोप में जिन चार महायुद्धों के कारण विनाश लीला हुई है। उनमें तीस वर्षीय युद्ध (1618-48) पहला है। सोलहवीं शताब्दी का अंत होते यूरोप में विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों के गुट बन गये थे। राजनीतिक तनाव के कारण विभिन्न गुटों के पारस्परिक संबंध विषाकत हो चले थे। की औंगसबर्ग की संधि ने यूरोप की धार्मिक समस्या को दोषपूर्ण ढंग से सुलझाया था। धार्मिक कट्टरता एवं घृणा के वातावरण में धार्मिक सहिष्णुता की स्थापना आसान न थी। धार्मिक आस्था को लेकर पैदा हुई उथल-पुथल में स्वार्थी तत्वों ने लाभ उठाना चाहा। राजाओं, सामंतों, धनिकों, व्यवसायियों सबके अपने निजी स्वार्थ थे। कोई अपनी धार्मिक स्थिति मजबूत करना चाहता था तो कोई राजनीतिक। इनके स्वार्थों में टकराहट इतनी थी कि तनाव बढ़ता ही जा रहा था। ऐसी तनावपूर्ण स्थिति में यूरोप के प्रमुख राजघरानों की आपसी प्रतिस्पर्द्धा भी शामिल हो गई और सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में संघर्ष अनिवार्य हो गया। संघर्ष इतना भयंकर होगा इसकी किसी को आशा नहीं थी। यह संघर्ष इतिहास तीस वर्षीय युद्ध के नाम से विख्यात है। इस युद्ध की शुरूआत 1618 में हुई और समाप्ति 1648 में तीस वर्षीय युद्ध वास्तव में बूर्षो और हैदस वर्ग के शासकों के बीच स्पेन और आस्ट्रिया में सत्ता के लिए संघर्ष था, जबकि यूरोप के अन्य देश इसमें किसी एक पक्ष के सहयोगी के रूप में शामिल हुए।
युद्ध का पहला कारण-
(i) धार्मिक कारण, जैसा राजा वैसा धर्म के सिद्धान्त के अनुसार उस राज्य का धर्म निश्चित होता था। जिसके कारण जनता में असंतोष था। प्रोटेस्टेन्ट लोगों के कैथोलिक मठों को जब भी अवसर पाते थे प्रोटेस्टेन्ट बना लेते थे किन्तु यह व्यवस्था लोगों के धर्म परिवर्तन में बड़ी भारी रूकावट थी, क्योंकि जो कैथोलिक प्रोटेस्टेन्ट होना चाहते थे उनको इस बात का बड़ा भय था कि उनकी सम्पत्ति को कैथोलिक चर्च जब्त कर लेगा। कालान्तर में महंथ दक्षिण जर्मनी व बोहेमिया में काल्विनवादियों का प्रभाव बढ़ा, तो उन्होंने समान

कानूनी अधिकारों की मांग की। उसी के फलस्वरूप तीस वर्षीय युद्ध प्रारंभ हुआ।

(ii) राजनीतिक कारण - धार्मिक तनाव के पीछे निहित राजनीतिक स्वार्थ काम कर रहे थे। राजनीतिक स्वार्थ के लिए धर्म का सहारा जरूरी था। धार्मिक सम्प्रदायों ने अगर अपने हित में शासकों को साथी बनाया तो शासक धर्म का झंडा अपने हितों के कारण ही ऊँचा किये हुए थे।

(iii) आर्थिक कारण- पूँजीवादी मनोवृति के पादरी शासक और धार्मिक वर्ग अपने-अपने ढंग से निजी स्वार्थ के लिए सक्रिय हुए थे।

तीस वर्षीय युद्ध के प्रथम और द्वितीय चरण में प्रोटेस्टेन्टों को बुरी तरह पराजय हुई। बोहेमिया के कुलीनों को दण्डित किया गया। प्रोटेस्टेन्ट धर्म को निषिद्ध घोषित किया गया। हजारों की संख्या में लोगों को नृसंशतापूर्वक मौत के घाट उतार दिया गया और उनकी सम्पत्ति जब्त कर ली गई। कई विद्रोही नेता को मृत्यु दण्ड दिया गया। कैथोलिक की पूर्ण विजय प्राप्त हुई। जब समय ने करवट ली तो शाही सेना टिली ने मई 1631 ई० में मैगडेबुर्ग प्रसिद्ध प्रोटेस्टेन्ट दुर्ग पर हमला किया और विजय प्राप्त की। मैगडेबुर्ग को बुरी तरह नष्ट, भष्ट किया और करीब बीस हजार प्रोटेस्टेन्टों को मौत के घाट उतार दिया। लेकिन जब एडोल्फस ने टिली पर जबरदस्त हमला किया तो सितम्बर 1631 में ब्राईटेनफेल्ड के युद्ध में सेनापति टिली को बुरी तरह पराजित किया। युद्ध में टिली के 7000 सैनिक मारे गये तथा 5000 बंदी बना लिये गये। टिली के पराजय से सारा यूरोप चौंक उठा। एडोल्फस की धाक जम गई। अब प्रोटेस्टेन्टों की खुशी की कोई सीमा न थी। आगे फ्रेंच काल के युद्ध के बाद 16 अक्टूबर 1648 में वेस्ट फेलिया की संधि हुई। यद्यपि इस संधि द्वारा तीस वर्षीय युद्ध की समाप्ति एवं पवित्र रोमन साम्राज्य में पुनः शान्ति स्थापित हुई। परन्तु स्पेन और फ्रांस का युद्ध आगामी ग्यारह वर्षों तक चलता रहा। अन्त में 1659 में पिरेनीज की संधि द्वारा फ्रांनकों-स्पेन युद्ध भी समाप्त हो गया। जियोफ्री पाकर ने माना है कि ''लोगों की स्थिति इतनी दयनीय एवं हास्यपद हो गई थी कि लोग सोचने लग गये थे कि भगवान कहीं नहीं है। ज्यों-ज्यों युद्ध लम्बा खिंचता गया त्यों-त्यों सामान्य भाग्यवाद और अत्याचार जनित सनकीपन लोगों में अधिक घर करता गया। कोई किसान आशा से बुवाई नहीं कर सकता था कि वह उसे कभी काट भी सकेगा। बहुत से लोगों के लिए पेट भरने का साधन लुटेरे तथा जत्थों में शामिल होना ही था। वेस्ट फेलिया संधि के साथ ही व्यापक धार्मिक कलह के युग का अंत हो गया साथ ही साथ निश्चित हो गया कि राजनीति धर्म से अधिक निर्णायक तत्व है। धार्मिक अंधविश्वास में जकड़ा जर्मनी विकास की दौड़ में कम से कम सौ वर्ष पिछड़ गया। और फ्रांस वर्षों तक यूरोप में सर्वशक्तिमान राज्य बना रहा। यदि सच कहा जाए तो धर्म ने मानव जाति का हित के बदले अहित ही किया। धर्म ने हमेशा से मानव जाति को लड़ाने का काम किया। आम आदमी को मानसिक तौर पर गुलाम बनाया। धर्म की आड़ में मानव जाति का हमेशा से सभी तरह का शोषण होता रहा। जिसने धार्मिक शोषण के विरूद्ध आवाज बुलंद की, उसकी आवाज सदा के लिए खामोश कर दी गई। इस युद्ध का प्रारम्भ मुख्यतया जर्मन में ही धार्मिक प्रश्न को लेकर हुआ, किन्तु शीघ्र ही आर्थिक और राजनीतिक कारण जो पर्दे के पीछे थे, सामने आ गये। युद्ध के अंतिम चरण में दो महान प्रश्नों का निर्णय होना था। प्रथम यूरोपीय राजनीतिक में कौन सा राज्य या राजवंश सार्वभौम व सर्वोपरि होगा। हैरसवर्ग राजवंश अथवा बूर्बो राजवंश? युद्ध का दूसरा निर्णाक प्रश्न था कि यूरोप में कौन सा धर्म सर्वमान्य होगा कैथोलिक या प्रोटेस्टेन्ट या दोनों ही? अब मैं धार्मिक अंधविश्वास में जकड़े श्रद्धालुओं की वास्तविक कहानी पर प्रकाश डालने जा रहा हूँ। उत्तराखंड में 15 एवं 16 जून 2013 को पहाड़ से भयंकर गर्जना के साथ पूरे देश से आ रही अलकनंदा

और मंदाकिनी नदी ने रौद्र रूप धारण कर लिया था चारों और चीख पुकार मची हुई थी। मानों किसी पेड़ के पत्ते हो अर्थात जल प्रलय ने जिस तरह केदारनाथ मंदिर क्षेत्र, रामबाड़ा, गौरीकुण्ड एवं सोन प्रयाग में कहर बरसाया उसमें सरकार के अनुसार आँकड़ा लगभग 10 हजार से 20 हजार पहुँच गया। वास्तव में 1 लाख लोग मारे गए। 17 जून 2013 की सुबह 24 घंटे के भीतर पानी का स्तर 15 फीट से अधिक बढ़ चुका था। बाढ़ और भूस्खलन में 90 धर्मशालाएँ बह गई, 60 गाँवों का अता-पता नही चला। जे0एन0यू0 के प्रो0 पुष्पेश पंत के अनुसार आतंकवादी एवं साम्राज्यवादी मुनाफाखोर खुदगर्ज हिमालय के बेहद नाजुक परिस्थितिकी को संकटग्रस्त बनाने के लिए जिम्मेदार हैं, वे खुद निरापद जगहों में बचें हुए हैं। जो वंचित पेट पालने की मजबूरी में सड़क किनारे काम करते थे वहीं अपने मेहमानों के साथ शिकार बने हैं।

धार्मिक अंधविश्वास तथा तीर्थयात्रा पर्यटन के नाम पर जो व्यवसाय प्रायोजित ढंग से पनपाया जाता रहा है या विकास के नाम पर जो भवन, पुल, सड़क निर्माण हो हर सरकार ने प्रोत्साहित किया है। सुनिता नारायण डयरेक्टर जनरल सेंटर फॉर साईंस एण्ड एनवायरमेंट के अनुसार उत्तराखंड की त्रासदी को प्राकृतिक आपदा कहना सच्चाई से मुँह मोड़ना है। वास्तव में निरंकुश शासक और दलाल नौकरशाह ने हिमालय क्षेत्र को अस्थिर कर दिया है। इससे भी बड़ा खतरा यह उत्पन्न हो गया है कि जलवायु परिवर्तन के कारण वर्षा तंत्र पर पड़ने वाले प्रभाव के चलते यह अधिक खतरे वाला क्षेत्र बन गया है। भारतीय मौसम विभाग के पास ऐसा कोई पूर्वानुमान तंत्र नहीं है जो सरकार को बादल फटने या अधिक बारिश के बारे में सूचित कर सके। राज्य सरकारों के पास भी ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है।

विशेष संवाददाता नीलू रंजन के अनुसार ''आपदा प्रबंधन में सरकार की भयानक सुस्ती ने देश की बहुत बड़ी आबादी की जिन्दगी गहरे जोखिम में झोंक दी है। राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन कानून के सात साल बाद भी राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन योजना नहीं बनी है। हैरानी की बात यह है कि यह तब हो रहा है। जब आपदा प्रबंधन के मुखिया, प्रधानमंत्री खुद है।

दो महिने पहले ही कैग ने आनी ऑडिट रिपोर्ट में प्राकृतिक विपत्ति से निपटने की तैयारी की पोल खोल दी थी। कैग ने साफ कर दिया था कि ऐसी स्थिति से आपदा आने पर भयंकर नुकसान को रोकना संभव नहीं होगा। अपनी रिपोर्ट में इस संस्था ने उत्तराखंड में आपदा प्रबंधन की तैयारियों पर भी सवाल उठाया था। इसके अनुसार उत्तराखंड में राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकारण सात साल पहले ही बन गया। लेकिन अभी तक उसकी एक भी बैठक नहीं हुई अर्थात उत्तराखंड में मानव प्रायोजित आपदा और उससे होने वाले नुकसान का न तो आकलन किया गया और न ही उससे निपटने की कोशिश शुरू हुई।

दरअसल राष्ट्रीय आपदा नियंत्रण प्राधिकरण शीर्ष संस्था है जो देश में आपदा के खतरों के वैज्ञानिक आकलन नुकसान रोकने और आपदाओं के दौरान राहत व बचाव के लिए अधिकृत है। 2004 की सुनामी के बाद 2005 में संसद से राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन कानून पारित हुआ था। कई आपदाओं के बावजूद 2008 में आज तक राष्ट्रीय आपदा कार्य समिति की बैठक तक नहीं हुई है। भूकम्प, भूस्खलन, बाढ़, तूफान और सूनामी के खतरे यहाँ और कितने हैं, इनका कोई वैज्ञानिक उपलब्ध नहीं है। पूर्वानुमान और आपदा के दौरान संचार का ढ़ाँचा खड़ा करने के लिए करीब सात परियोजनाएँ 2003 से लेकर 2008 के बीच अलग-अलग अपने मौके पर मंजूर की गई। कैग की रिपोर्ट कहती है कि इमें कोई भी योजना पूर्ण नहीं हो सकी है। हालात यह है कि खुद प्रधानमंत्री कार्यालय के आवास में लगा सेटेलाईट काम नहीं कर रहा है, जो कि आपदा प्रबंधन के लिए उपग्रह संचार नेटवर्क परियोजना का हिस्सा है।

प्राख्यात पर्यावरणविद और मैग्सेसे पुरस्कार सम्मानित लेखक एम० सी० मेहता का कहना है कि केदारनाथ और बद्रीनाथ में प्रकृति का रौद्र रूप देखने-सुनने को मिला है, जो हमारी चिन्ता को बढ़ाता है। क्योंकि यह प्राकृतिक से कहीं ज्यादा मानवीय आपदा है जो दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। ऐसी आपदाएँ भविष्य में और बढ़ें तो आश्चर्य नहीं क्योंकि हमारी सरकार ने जो मॉडल चुना है वह विकास का नहीं विनाश का है। वन क्षेत्र में अन्धाधुन्ध चलती आती पहाडों पर होटलों की बढ़ती संख्या, नदियों के बहाव क्षेत्र का अतिक्रमण करके बस्तियों की बसावट आपदाओं को आमंत्रित कर रही है। विकास के नाम पर नियमों को ताक पर रखकर दुकानों और भवन खड़े किये जा रहे हैं। बड़ी कारपोरेट कंपनियों को प्राकृतिक संपदा के दोहन की खुली छूट दी जा रही है।

तीर्थ स्थल को पर्यटक स्थल के रूप में तब्दील कर दिया गया है और इसे पर्वतीय राज्य के विकास का नया आर्थिक आधार बताया जा रहा है।

उदाहरण के तौर पर उत्तराखंड की आबादी करीब एक करोड़ है लेकिन सालाना लगभग दो करोड़ लोग बतौर पर्यटन यहाँ आते हैं। जो अपने पीछे पहाड़ों पर गंदगी का अंबार छोड़ जाते हैं। जिसकी साफ-सफाई की व्यवस्था शायद ही की जाती है, जिससे प्राकृतिक असंतुलन बढ़ रहा है।

उर्जा उत्पादन के नाम पर बाँधों और जल बिजली परियोजनाओं की बाढ़ सी आ गई है, लेकिन पर्यावरण मंत्रालय को इसमें कोई खामी नजर नहीं आयी।

भारत समेत दुनिया के तमाम विशेषज्ञ व पर्यावरणविद बार-बार आग्रह करते रहते है कि उत्तराखंड का पहाड़ कच्चा है और यह अधिक भार सहन करने योग्य नहीं है। इसके बावजूद सरकार मनमानी करती चली आ रही है।

जब मौसम विभाग ने 16 जून को भारी बारिश के आसार जताए थे, तो तीर्थ यात्रियों को रोका क्यों नहीं गया ? इसका दोषी कौन है ? निश्चित रूप से यह प्रधानमंत्री की सीधे-सीधे जिम्मेदारी थी, जिसका निर्वहन करने में वह विफल रहे।

हमने गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित कर दिया, लेकिन बाँध बनाकर इसका गला घोटने का काम भी कर रहे है। उसके उद्‌गम स्थल को दूषित कर रहे है। सामंतो और नव साम्राज्यवादियों के हित में शासन और प्रशासन काम कर रहे है। आकार प्रकृति नियम और कानून तथा अधिकार को बेदखल कर रही है।

सरकारी कर्मचारी से लेकर सरकार तक सामंतों पूंजी पतियों के लिए काम कर रहे है, उन्हें न तो पहाड़ों की चिंता है, न नदियों की और न ही प्रांत तथा राज्य के लोगों की जन भावनाओं की आम जनता की आवाज को दबा दिया जाता है।

विशेषज्ञों और पर्यावरण विदों की बात को अनसुना कर दिया जाता है और तबाही होने पर प्राकृतिक आपदा का नाम दे दिया जाता है।

सच कहा जाय तो उत्तराखंड की भारी तबाही का कारण केवल प्राकृति का कोप नहीं है, इसके लिए ज्यादा जिम्मेदार हमारी सरकारी मशीनरी का टालू रवैया है। जो टालू रवैया उसने हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, जैसे भयावह तबाही में दिखाया है। वही वह दूसरी जगहों पर भी दिखाया जाता है। उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र और असम जैसे राज्यों में हर साल आने वाली बाढ़ और उसके चलते होने वाली भारी तबाही इसी का एक नमूना है।

उत्तराखंड जैसी आपदा देश के किसी भी हिस्से में कभी भी दोहराई जा सकती है, क्योंकि बाढ़ के कहर से लोगों को बचाना तो दूर, खतरे से आगाह करने तक का मुकम्मल इंतजाम नहीं है। आपदा प्रबंधन ढ़ोल नगाडों की असलियत यह है कि असम को छोड़कर किसी भी राज्य के पास बाढ़ के खतरे को बताने वाले नक्शे नहीं है और 29 राज्यों में मौजूद 4728 बड़े बाँधों व जलाशयों में केवल पाँच फीसदी के लिए आकस्मिक कार्य योजना बन पाई है। बाढ़ की चेतावनी देने का जिम्मेदार केन्द्रीय जल आयोग कभी यह नहीं बता सकता कि कब और

कहां बाढ़ आ घेरेगी क्योंकि उसके पास एक फीसदी से भी कम बाँधों व जलाशयों के जलस्तर की सूचनाएँ उपलब्ध है। बाढ़ पर राष्ट्रीय आयोग की रिपोर्ट के अनुसार हमारे देश में बाढ़ के कारण हर साल लगभग हजारों करोड़ों का नुकसान होता है।

बाढ़ भारत में सलाना आपदा है और चेतावनी तंत्र की कमजोरी इसे हर साल कहर में बदल देती है। योजना आयोग के कार्यदल के मुताबिक भारत में हर साल 456.40 लाख हेक्टेयर जमीन बाढ़ के खतरे में रहती है। और 72.75 लाख हेक्टेयर जमीन हर साल बाढ़ में घिरती है। जिसमें करीब 35 लाख हेक्टेयर जमीन खेतिहार हैं। वही उत्तराखंड पर्यटक केन्द्रो एवं सीमा सुरक्षा की हाक्ट्रि से मोटर सड़कों का जाल बिछाया गया। अधिकांश सड़के यहाँ की प्रमुख नदियों के तटवर्ती क्षेत्रों से ले जाई गई। इसी आधार पर पुरानी चट्टानों का अस्तित्व समाप्त हो गया। और नए-नए बाजार रातों-रात खड़े हो गये। मोटर सड़क भी अधिकतर क्षेत्रों मे खोदी गई। बारूद के धमाके से ये क्षेत्र अस्थिर हो गये। सड़कों के आसपास के जंगलो को भी बेतहाशा विनाश शुरू हुआ।

ऊपर से नदियों द्वारा टो-कटिंग होती रही। पिछले तीन दशकों में उत्तराखंड के गाँव-गाँव का मोटर-मार्ग से जोड़ने की हमारी महत्वाकांक्षा रहीं है। एक दर्जन लगभग राष्ट्रीय एवं राज्य मार्गों का निर्माण एवं विस्तारीकरण के अलावा गाँवों को जोड़ने के लिए एक हजार से अधिक छोटी-बड़ी मोटर सड़कों का निर्माण किया गया। मोटर मार्गो के लिए पहाड़ों को काटकर एवं खोदकर मिट्टी एवं चट्टानों को निचले भाग में बेहतरीन ढंग से फैंका जाता रहा।

पहाड़ों में हो रहे भू-भष्टतलन और बाढ़ से अब यमुना, भागीरथी, अलकनंदा, रामगंगा, कोशी के मैदानी क्षेत्र भी अब डूब एवं जलभराव की परिधी में आ गए है। नदियों का तल उठने से उत्तराखंड के एक तराई क्षेत्र उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा तथा दिल्ली की नदीं किनारे की बस्तियां अब अधिक तेजी के साथ जलभराव एवं बाढ़ की चपेट में आ रहे है। अन्य तथ्यों पर गौर करें तो उत्तराखंड की त्रासदी के लिए हमारा शासनतंत्र जिम्मेदार है। कारण प्रत्येक नदी बेसिन में बड़ी संख्या में प्रोजेक्ट है। लेकिन उनके संबंध में हमारा कोई दोष आंकलन नहीं है। अब कल्पना कीजिए कि पनबिजली परियोजनाओं (जिसमें बड़े बाँध शामिल) में सम्पूर्ण नदी की धारा को भूमिगत सुरंगों में तबदील कर दिया जाता है। जो कि 20-30 कि० मी० लंबी होती है और इतनी चौडी होती है कि तीन ट्रेने एक साथ गुजर सके।

नाजुक भूस्खलन की आशंका वाले पर्वतों में बड़ी मात्रा में डयनामाईट के विस्फोट से इन सुरंगों का निर्माण किया जाता है। इसके अलावा प्रत्येक प्रोजेक्ट निर्माण के लिए शहरों, सड़कों और वनों की कटाई की जाती है। मोटे तौर पर राज्य में इस तरह के सौ से भी ज्यादा प्रोजेक्ट हैं। इसके अलावा प्रत्येक प्रोजेक्ट को तभी स्वीकृति मिलती है जब पर्यावरण एवं धन योजनाओं और कई अन्य शर्तों को पूरा किया जाता है। लेकिन हमारा पर्यावरण स्वीकृति का कोई व्यवस्थित तंत्र नहीं है।

इस त्रासदी के लिए राज्य सरकार के साथ-साथ केन्द्र सरकार भी जिम्मेदार है क्योंकि उन्हें पूँजीपतियों एवं साम्राज्यवादियों के हितों की चिन्ता है। आम आदमी के हितों की नहीं।

बाढ़ केवल प्राकृतिक आपदा भी नहीं है, बल्कि यह एक तरह से प्राकृति की चेतावनी भी है। सवाल यह है कि क्या हम पढ़-लिख लेने के बावजूद भी प्रकृति की इन चेतावनियों को समझ पाते हैं? हमारी शिक्षा व्यवस्था एवं राजनैतिक व्यवस्था में धार्मिक अंधविश्वास का बोलबाला है। यह विडंबना ही है कि पहले से अधिक पढ़े-लिखे समाज में प्राकृति के साथ सांमजस्य बैठाकर जीवन जीने की समझदारी उनकी भी विकसित नहीं हो पाई है अर्थात प्रकृति के साथ हम जैसा व्यवहार कर रहे हैं वैसा ही व्यवहार प्रकृति भी हमारे साथ कर रही है।

भावना कभी नहीं मरती

शिव वर्मा

वह जुलाई, 1930 का अन्तिम रविवार था। भगतसिंह लाहौर सेण्ट्रल जेल से हमें मिलने के लिए बोर्स्टल जेल आये थे। वे इस तर्क पर सरकार से यह सुविधा हासिल करने में क़ामयाब हो गये थे कि उन्हे दूसरे अभियुक्तों के साथ बचाव के तरीक़ों पर बातचीत करनी है। तो उस दिन हम किसी राजनीतिक विषय पर बहस कर रहे थे कि बातों का रूख़ फ़ैसले की तरफ़ मुड़ गया, जिसका हम सबको बेसब्री से इन्तज़ार था। मज़ाक़-मज़ाक में हम एक दूसरे के ख़िलाफ़ फ़ैसले सुनाने लगे, सिर्फ़ राजगुरू और भगतसिंह को इन फ़ैसलों से बरी रखा गया। हम जानते थे कि उन्हें फाँसी पर लटकाया जायेगा।

''और राजगुरू और मेरा फ़ैसला ? क्या आप लोग हमें बरी कर रहे हैं ?'' मुस्कुराते हुए भगतसिंह ने पूछा।

किसी ने कोई जवाब नहीं दिया।

''असलियत को स्वीकार करते डर लगता है ?'' धीमे स्वर में उन्होंने पूछा। चुप्पी छाई रही।

हमारी चुप्पी पर उन्होंने ठहाका लगाया और बोले, ''हमें गरदन से फाँसी के फन्दे से तब तक लटकाया जाए जब तक की हम मर न जायें। यह है असलियत। मैं इसे जानता हूँ। तुम भी जानते हो। फिर इसकी तरफ़ से आँखें क्यों बन्द करते हो ?''

अब तक भगतसिंह अपने रंग में आ चुके थे। वे बहुत धीमे स्वर में बोल रहे थे। यही उनका तरीक़ा था। सुनने वालों को लगता था कि वे उन्हें फुसलाने की कोशिश कर रहे हैं। चिल्लाकर बोलना उनकी आदत नहीं थी। यही शायद उनकी शक्ति भी थी।

वे अपने स्वाभाविक अन्दाज़ में बोलते रहे, ''देशभक्ति के लिए यह सर्वोच्च पुरस्कार है, और मुझे गर्व है कि मैं यह पुरस्कार पाने जा रहा हूँ। वे सोचते हैं कि मेरे पार्थिव शरीर को नष्ट करके वे इस देश में सुरक्षित रह जायेंगे। यह उनकी भूल है। वे मुझे मार सकते है, लेकिन मेरे विचारों को नहीं मार सकते। वे मेरे शरीर को कुचल सकते है, लेकिन मेरी भावनाओं को नहीं कुचल सकेंगे। ब्रिटिश हुकूमत के सिर पर मेरे विचार उस समय तक एक अभिशाप की तरह मँडराते रहेंगे जब तक वे यहाँ से भागने के लिए मजबूर न हो जायें।''

भगतसिंह पूरे आवेश में बोल रहे थे। कुछ समय के लिए हम लोग भूल गये कि जो आदमी हमारे सामने बैठा है वह हमारा सहयोगी है। वे बोलते जा रहे थे : ''लेकिन यह तस्वीर का सिर्फ एक पहलू है। दूसरा पहलू भी उनता ही उज्ज्वल है। ब्रिटिश हुकूमत के लिए मरा हुआ भगतसिंह जीवित भगतसिंह से ज़्यादा ख़तरनाक होगा। मुझे फाँसी हो जाने के बाद मेरे क्रान्तिकारी विचारों की सुगन्ध हमारे इस मनोहर देश के वातावरण में व्याप्त हो जायेगी। वह नौजवानों को मदहोश करेगी और वे आज़ादी और क्रान्ति के लिए पागल हो उठेंगे। नौजवानों का यह पागलपन ही ब्रिटिश साम्राज्यवादियों को विनाश के कगार पर पहुँचा देगा। यह मेरा दृढ़ विश्वास है। मैं बेसब्री के साथ उस दिन का इन्तज़ार कर रहा हूँ जब मुझे देश के लिए मेरी सेवाओं और जनता के लिए मेरे प्रेम का सर्वोच्च पुरस्कार मिलेगा''

भगतसिंह की भविष्यवाणी एक साल के अन्दर ही सच साबित हुई। उनका नाम मौत की चुनौती देने वाले साहस, बलिदान, देशभक्ति और संकल्पशीलता का प्रतीक बन गया। समाजवादी समाज की स्थापना का उनका सपना शिक्षित युवकों का सपना बन गया और 'इन्क़लाब ज़िन्दाबाद' का उनका नारा समूचे राष्ट्र का यु)नाद हो गया। 1930-32 में जनता एक होकर उठ खड़ी हुई। कारागार, कोड़े और लाठियों के प्रहार उसके मनोबल को तोड़ नहीं सके। यही भावना, इससे भी ऊँचे स्तर पर, 'भारत छोड़ो' आन्दोलन के दौरान दिखायी दी थी। भगतसिंह का नाम होंठों पर और उनका नारा अपने झण्डों पर लिये हुए किशोरों और बच्चों ने गोलियों का सामना इस तरह किया मानो वे मक्खन की बनी हुई हों। पूरा राष्ट्र पागल हो उठा था। और फिर आया 1945-46 का दौर जब विश्व ने एक सर्वथा नये भारत को करवटें बदलते देखा। मज़दूर, किसान, छात्र, नवयुवक, नौसेना, थलसेना, वायुसेना और पुलिस तक - सब कड़ा प्रहार करने के लिए आतुर थे। निष्क्रिय प्रतिरोध की जगह सक्रिय जवाबी हमले ने ले ली। बलिदान और यातनाओं को सहन करने की जो भावना 1930-31 तक थोड़े से नौजवानों तक सीमित थी, अब समूची जनता में दिखायी दे रही थी। विदोह की भावना ने पूरे राष्ट्र को अपनी गिरफ़्त में जकड़ लिया था। भगतसिंह ने ठीक ही तो कहा था, ''भावना कभी नहीं मरती।'' और उस समय भी वह मरी नहीं थी।

किश्त-2

ब्रह्माण्ड यात्रा

— डा. अवतार सिंह ढींढसा

साथियो! देखो, उस सामने चमकते दृष्टिगोचर हो रहे चांद की ओर। अब हम चलेंगे पृथ्वी के उपग्रह चंद्रमा की ओर---जिसे ज्योतिष ने एक ग्रह ही माना हुआ है। ज्योतिष यहां पर भी असत्य का सहारा लेता है। चन्द्रमा को ग्रह मानना ही गलत है, फिर ग्रह मान कर की गई गणना ने तो गलत होना ही है। अतः दोस्तो ज्योतिष तो केवल एवं केवल है ही झूठ का पुलिन्दा। परन्तु हमारा चंद्रमा के साथ अत्यन्त गहरा संबंध है। धक्के खाने दो ज्योतिष एवं ज्योतिषियों को, आओ चलें हम करें चन्द्रमा की सैर---साथियो सावधान! चन्द्रमा की ओर जाने से पूर्व हमारे लिए अंतरिक्षीय वस्त्र पहनने अत्यावश्यक हैं, क्योंकि चन्द्रमा पर वायु एवं इसका दबाव नहीं है। अंतरिक्षीय वस्त्र हमें कृत्रिम दबाव प्रदान करते हैं, अन्यथा हमारी नसों में बहता हुआ रक्त हमारी त्वचा में से बाहर आ जाएगा तथा यह मृत्यु की ओर प्रथम कदम है।

अब आप यह पूछेंगे कि चांद कहां से आया? दो वैज्ञानिक थ्योरियां प्रचलित हैं। प्रथम यह कि यह पृथ्वी का हिस्सा था। किसी बड़े उल्का पिण्ड के पृथ्वी के साथ तिरछा टकरा जाने से पृथ्वी का कुछ भाग अलग हो गया, परन्तु पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण ने इसे अपने इर्द-गिर्द ही घूमने लगा दिया। इस कारण चन्द्रमा एवं पृथ्वी परस्पर एक दूसरे को गुरूत्वाकर्षण के साथ खींचते हुए इकट्ठे ही सूर्य के गिर्द चक्कर लगा रहे हैं। दूसरी थ्योरी के अनुसार चन्द्रमा बना ही हमारी पृथ्वी के साथ ही है अर्थात् इसकी आयु भी हमारी पृथ्वी जितनी ही है। शायद इसी कारण इसे चन्दा मामा भी कहा जाता है।

दोस्तो, चांद की अपनी कोई रोशनी नहीं है। यह सूर्य की रोशनी के साथ ही चमकता है। अर्थात् यह सूर्य की रोशनी को ही परिवर्तित करता है। इस प्रकार यह सूर्य की रोशनी का केवल 7 प्रतिशत ही वापिस हमारी ओर परिवर्तित करता है। परन्तु ज्योतिष मानता है कि चन्द्रमा की अपनी रोशनी है तथा यह हमें प्रभावित करती है। अनुमान आप स्वयं लगा लें कि ज्योतिष सच्चा है अथवा झूठा?

चन्द्रमा हमारी पृथ्वी के गिर्द अण्डाकार पथ में चक्कर लगाता है। अर्थात् किसी महीने यह पृथ्वी के नजदीक, लगभग 3 लाख 54 हजार 350 किलोमीटर की दूरी पर होता है तथा किसी महिने यह पृथ्वी से 4 लाख 4 हजार 336 किलोमीटर की दूरी पर चला जाता है। जरा पीछे मुड़ कर तो देखो----हम अब पृथ्वी के गोले से दूर जा रहे हैं, पृथ्वी का आकार लगातार छोटा होता हुआ दिखाई देगा। परन्तु चन्द्रमा आकार में हमारी पृथ्वी से छोटा है। इसका व्यास 3476 किलोमीटर है जबकि पृथ्वी का व्यास 12756 किलोमीटर है।

अब आप पूछेंगे कि क्या चंद्रमा की सतह पर हम पृथ्वी की तरह से चल फिर सकते हैं? हां, हां बहुत आसानी से। आपको शायद स्मरण ही होगा कि अपोलो 11 मिशन द्वारा 21 जुलाई 1969 को अमेरिकी अंतरिक्ष यात्री नील आर्मस्ट्रांग एवं एडविन एल्ड्रिन तो बाकायदा चांद की सतह पर चल फिर कर आये थे तथा चन्द्रमा की मिट्टी के नमूने भी साथ लेकर आए थे। इनका तीसरा सहयोगी माईकल कोलिन्ज, अन्तरिक्षीय राकेट को चंद्रमा के इर्द-गिर्द उड़ाता रहा था। परन्तु कुछ लोग इसे अमेरिका का झूठ कहते हैं। अभी तक कुल 12 अंतरिक्ष यात्री चन्द्रमा की सतह पर चल फिर कर आए हैं।

साथियो! पृथ्वी से देखने पर चन्द्रमा में जो काले धब्बे दिखाई देते हैं, वह हैं- गहरे समुद्र अर्थात् अब सूख चुकी, गहरी खाईयां। चन्द्रमा पर पृथ्वी जैसा सफेद दिन नहीं होता। सिर्फ वह स्थान जहां पर सूर्य की रोशनी पड़ती है, वह ही दिखाई देता है। चंद्रमा से आकाश हमेशा ही बिल्कुल रात के अंधेरे जैसा, तारों से परिपूर्ण दिखाई देता है तथा हैरान न होना, इस रात्रि जैसे अंधेरे में भी सूर्य चमकता है। पृथ्वी पर सफेद दिन की रोशनी का कारण, हमारे

मण्डल में वायु के गैसीय कण एवं धूलिकण हैं जो सूर्य की रोशनी के साथ चमकते हैं। इनकी इस तेज चमक के कारण ही सफेद दिन होता है तथा इसी रोशनी के कारण हमें दिन के समय तारे भी दिखाई नहीं देते। जब कि चन्द्रमा पर तो वायुमण्डल है ही नहीं। ठहरो, पहले आपके इस प्रश्न का उत्तर दे दूँ-----क्यों नहीं है चन्द्रमा पर वायुमण्डल? चन्द्रमा क्योंकि पृथ्वी से छोटा है। इसलिए गुरूत्वाकर्षण भी पृथ्वी का छठा भाग ही है, इसलिए चन्द्रमा का गुरूत्वाकर्षण गैसों के कणों को अपने पास बांध कर नहीं रख सका तथा इस वायुमण्डल का न होना, चन्द्रमा पर तापमान को प्रभावित करता है। यहां पर दिन के समय तापमान 117° सैल्सियस तक पहुँच जाता है। आपको यह तो ज्ञात ही है कि पानी तो 100° सैल्सियस पर ही भाप बन कर उड़ जाता है। इसी कारण चन्द्रमा पर पानी नहीं है। परन्तु इस सतह में पाये जाते कुछ यौगिकों में पानी के अणू मौजूद हैं। इनके बारे में खोज भारत के अंतरिक्षीय 'चन्द्रयान' ने की थी। अतः जीवन के लिए हवा, पानी एवं उचित तापमान न होने के कारण, चन्द्रमा की सतह उजाड़ ही है। ऊँचे पहाड़ एवं गहरी खाईयां। रात्रि के बारे में पूछते हो---- रात्रि का तापमान तो 180° सैल्सियस तक नीचे चला जाता है। शून्य डिगरी पर पानी जम जाता है तथा ऋणात्मक 180° सैल्सियस पर तो शरीर का रक्त, कोशिकाएं सभी कुछ सैकिंडों में जम कर ठोस पत्थर की तरह ठोस हो जाएंगे। अतः चन्द्रमा पर जीवन का कोई नामो-निशान नहीं है। यहां पर वायुमण्डल न होने के कारण, वायु का कोई दबाव नहीं है। इसी कारण अंतरिक्ष यात्री तो विशेष दबाव वाले अंतरिक्षीय वस्त्र पहनकर ही चन्द्रमा पर अथवा अंतरिक्ष में जाते हैं।

दोस्तो, चन्द्रमा क्योंकि पृथ्वी से आकार में छोटा है, इसलिए इसका गुरूत्वाकर्षण पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण से छठा भाग कम है। इसका अर्थ यह है कि यदि एक व्यक्ति का वजन पृथ्वी पर 60 किलोग्राम है तो चन्द्रमा पर उसका वजन केवल 10 किलोग्राम होगा, अथवा इस प्रकार समझ लो कि यदि बच्चा पृथ्वी पर तीन फुट ऊंची छलांग लगा सकता है तो चन्द्रमा के ऊपर वही बच्चा, उसी शक्ति के साथ, 18 फुट ऊंची छलांग लगा सकता है। स्पष्ट है कि 12-14 फुट ऊंची घर की छत पर चढ़ने के लिए सीढ़ी की आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी!!! परन्तु चन्द्रमा और पृथ्वी दोनों एक-दूसरे को खींचते हैं। इसी कारण ही तो चन्द्रमा पृथ्वी के गिर्द चक्कर लगा रहा है।

साथियो! आपको ज्योतिषियों की एक चालाकी भरी कहानी सुना दूं। वे विज्ञान के उस नियम की व्याख्या तो देते हैं जिस से उनका लूट का धन्धा चलता रहे, परन्तु सम्पूर्ण नियम की व्याख्या वे चालाकी के साथ छुपा लेते हैं। उनका कथन है कि यदि चन्द्रमा एवं सूर्य का गुरूत्वाकर्षण समुद्र में ज्वार-भाटा ला सकते हैं अर्थात् इनका गुरूत्वाकर्षण इतने बड़े समुद्र को प्रभावित कर सकता है तो फिर यह मानव जीवन को क्यों प्रभावित नहीं करेगा? ज्वार-भाटा वाली बात वैज्ञानिक तौर पर सही है, परन्तु मानव के रक्त (तरल) को प्रभावित करने वाले तर्क को....विज्ञान की कसौटी पर हम इस प्रकार परखेंगे। समुद्र के पानी की सतह पर सिर्फ और सिर्फ हवा होती है, इसे खुला प्रबन्ध कहा जाता है...परन्तु मानव का रक्त खुला प्रबन्ध नहीं है, यह तो बकायदा नसों में बह रहा है। दूसरे मानव के हृदय के द्वारा रक्त के ऊपर लगाया गया दबाव. ..चन्द्रमा अथवा सूर्य द्वारा लगाए गुरूत्व बल से कई गुना अधिक है। इस वैज्ञानिक रहस्य का ज्योतिषी कभी भी व्याख्यान नहीं करते। अतः यह स्पष्ट है कि चन्द्रमा/सूर्य का अमावस अथवा पूर्णिमा के अवसर पर लगाया गया गुरूत्व बल, मानवी हृदय द्वारा लगाए गए गुरूत्व बल से कम होने के कारण, इसका मानव जीवन पर कोई प्रभाव नहीं है। अतः चन्द्रमा किसी भी पुरूष, महिला, बच्चे अथवा बूढ़े को किसी भी तरह से प्रभावित नहीं करता। यदि यह खींचता है तो समस्त पृथ्वी को ही खींचता है, अकेले-अकेले मानव को चन्द्रमा द्वारा खींचने की शक्ति तो पृथ्वी के मनुष्य के ऊपर लग रहे गुरूत्वाकर्षण से सैंकड़ो गुना कम है।

दोस्तो, हमारे पड़ोसी चन्द्रमा के दिन-रात

के बारे में कुछ बातें हो जाए.....चन्द्रमा पृथ्वी के गिर्द अपना एक चक्कर 27 दिन एवं 8 घण्टों में पूरा करता है। चन्द्रमा का एक दिन हमारे दो सप्ताह के बराबर होता है तथा रात भी दो सप्ताह के बराबर। अर्थात् पृथ्वी के दिन-रात 24 घण्टे के होते हैं तथा चन्द्रमा का एक दिन-रात 4 सप्ताह के बराबर अर्थात् 29 दिन से थोड़ा अधिक होता है। इसका अर्थ यह है कि हम पृथ्वी से हमेशा ही चन्द्रमा को एक तरफ से ही देख सकते हैं।

कहानी सुनाते-सुनाते हम कब चन्द्रमा पर पहुँच गए, पता ही नहीं लगा। आओ उतरते हैं चांद की पथरीली भूमि पर। चारों ओर पहाड़, चन्द्रमा पर गिरे उल्का पिण्डों के द्वारा बनाई गई गहरी खाईयां....गहरे अन्धेरे स्थान जैसे कि समुद्र सूख गए हो....अजीब सा नजारा है। कोई हवा नहीं, कोई बादल नहीं....दिन में भी आकाश काला....तारों से परिपूर्ण!!! दोस्तो यहां चन्द्रमा की सतह से ऊपर की ओर देखने पर कोई चांद नजर नहीं आता बल्कि उगती हुई व छिपती हुई पृथ्वी दिखाई देती है....अब ज्योतिष एवं ज्योतिषी क्या करेंगे?.....ढूंढेगे पृथ्वी ग्रह का प्रभाव हम सभी पर!!! क्योंकि चन्द्रमा के ऊपर से देखने पर पृथ्वी चन्द्रमा के गिर्द घूमती हुई प्रतीत होती है।

दोस्तो, हम चन्द्रमा के बारे में बातों-बातों में यह भूल ही गए कि चन्द्रमा को दरपेश राहू-केतू वाली एक बड़ी मुश्किल भी है। चलो पहले इसके बारे में भी विचार कर लें। ज्योतिष बताता है कि चन्द्रमा ग्रहण के समय राहू-केतू दो नीच ग्रहों ने चन्द्रमा को घेर लिया है, क्योंकि चन्द्र देवता ने इन दुष्टों का कर्जा देना है....अतः चन्द्र देवता के कर्जा उतारने के बहाने ज्योतिषियों, ढोंगियों को 6 महिने तक के राशन-पानी व वस्त्र इत्यादि दान-दक्षिणा के रूप में मिल जाते हैं। वास्तव में शायद अज्ञानता के कारण लोगों ने ज्योतिषियों का कर्जा देना होता है जो बेचारे दिये जाते हैं।

परन्तु वास्तविकता यह है कि हमारे सौर-मण्डल में राहू-केतू नाम के कोई स्थूल ग्रह ही नहीं हैं। यह इस प्रकार घटित होता है कि चन्द्रमा पर...हमारी पृथ्वी की छाया तब ही पड़ती है, जब पूर्णिमा वाले दिन पृथ्वी...सूर्य एवं चन्द्रमा के, मध्य में तथा सीधी लाईन में आ जाती है। बस....सूर्य की रोशनी चन्द्रमा के जिस भाग पर नहीं पड़ती, वह भाग पृथ्वी की छाया में काला दिखाई देता है। इसी प्रकार जब चन्द्रमा...पृथ्वी एवं सूर्य के मध्य में आ जाता है तो चांद की टिकिया सूर्य के गोले के आगे आ कर उसे पूर्णतः ढक लेती है। परिणाम-स्वरूप दिन के समय में भी अन्धेरा होने लगता है। कुछ देरी के उपरान्त चन्द्रमा अपने पथ पर चलता हुआ आगे निकल जाता है तथा सूर्य फिर से दिखाई देने लग जाता है। दान-दक्षिणा दो अथवा न दो कोई भी फर्क नहीं पड़ता। यह सब कुछ करोड़ों वर्षो से होता आया है तथा होता रहेगा। इस का किसी प्रकार का कोई भी बुरा - प्रभाव किसी भी महिला, पुरूष, बच्चे, बूढ़े अथवा अन्य जीवों पर नहीं पड़ता। गर्भवती महिलाओं पर इसके प्रभाव की बात की जाती है। साथियो, क्या आपने आज तक अपनी आंखों से कभी किसी नये जन्में बच्चे पर ग्रहण का प्रभाव देखा है? आपने नहीं देखा और न ही कभी देखोगे, फिर सुनी-सुनाई अथवा ज्योतिषियों द्वारा साधारण जनता को भ्रमित करने के लिए चलाई गई बातों को क्यों अपनी सोच में स्थान दिए बैठे हो। फैसला आपके हाथ में है। परन्तु एक बात का ध्यान अवश्य रखना कि सूर्य ग्रहण को नंगी आंखों से सीधे कभी नहीं देखना... अन्यथा सूर्य की तीव्र गर्मी से सदा के लिए अन्धापन हो जाएगा। दोस्तो, वो सामने देखो एक अत्यन्त चमकता हुआ तारा....यह तारा नहीं... शुक्र ग्रह है.... यात्रा जारी है, आशा है कि आप आगामी अंक में मेरे साथ शुक्र ग्रह की सैर अवश्य करेंगे।

(क्रमशः)

हिन्दी अनुवाद,
बलवन्त सिंह प्राध्यापक

राष्ट्र धर्म निष्पक्ष नहीं निरपेक्ष हो

हेम राज स्टेनो

अंग्रेजी के सेक्यूलिरिज्म (Secularism) शब्द का अनुवाद धर्म-निष्पक्ष करके यह अर्थ किया गया कि राज की नीति धर्म-निरपेक्ष होगी। राज धर्म के आधार पर पक्षपात या भेदभाव नहीं करेगा।

पहले इसे देखते है। विद्वानों के अनुसार हमारे देख में छोटे-बड़े कुल मिलाकर 1700 धर्म हैं। बड़े धर्मों के धार्मिक महत्व वाले दिनों पर छुट्टियां की जाती हैं परन्तु छोटे पूरे 1700 धर्मों के महत्व वाले दिनों पर छुट्टियां नहीं की जाती। इसे धार्मिक पक्षपात नहीं कहोगे तो क्या कहोगे? यही ही नहीं बल्कि कुछ धर्मों के श्रद्धालुओं की धार्मिक यात्राओं के लिए सरकार द्वारा बकायदा सुविधाएं एवं छूट दी जाती है। जैसे हज्ज व अमरनाथ यात्रा। अब इसके विपरीत देखो राजस्थान के बीकानेर शहर से 35 किलोमीटर की दूरी पर देशनोक स्थित करणी देवी का मंदर है, इस मंदिर में लोग श्रद्धा के तौर पर चूहों की पूजा करते हैं परन्तु सरकार इन श्रद्धालुओं को कोई सहायता नहीं देती है और न ही चूहों के लिए प्रशाद का कोई इंतजाम करती है। उल्टा चूहेमार गतिविधयां चलाती है। हम चूहे मारने वाली गतिविधियों के विरुद्ध नहीं हैं परन्तु चूहों को पूजने वाले श्रद्धालुओं के नजरिये से तो यह धर्म आधारित पक्षपात ही माना जाएगा।

हम सभी जानते हैं कि राज्य ने धार्मिक भावनाओं को चोट पहुंचाने विरुद्ध मुकदमा दर्ज करने का कानून बनाया हुआ है। हम किसी की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाने को ठीक नहीं कहते। सबाल तो यह है कि धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाने विरुद्ध कानून तो है परन्तु गैर धार्मिक लोगों के लिए कोई कानून नहीं है, बल्कि धार्मिक ग्रंथों में नास्तिकों को मार देने तक को ठीक ठहराया गया है जैसे मनु समृति कहती है कि नास्तिक को मारना पाप नहीं है, इसी तरह बाबा फरीद का श्लोक है कि जो सिर साई आगे नहीं झुकता उसको सूखी लकड़ी समझकर चूल्हे में डाल देना चाहिए। ऐसा नास्तिकों की भावनाओं पर चोट नहीं हैं? पंजाब सरकार ने धार्मिक भावनाओं को चोट पहुंचाने के लिए सजा बढ़ाने के लिए तरजीह तो पेश की हुई है परन्तु आज तक किसी भी राज्य या केंद्र सरकार ने नास्तिकों की भावनाओं को ठेस पहुंचाने के विरुद्ध सजा वाला कानून बनाने की जरूरत नहीं समझी। फिर राज्य धर्म निरपेक्ष कैसे हुआ। यह धर्म पक्ष ही बन गया है।

आगे सुनो। संसद और विधान सभाओं में चुने हुए प्रतिनिधि अपने अपने धर्म के अनुसार कसम उठाते हैं। यहां ये बात गलत लग सकती है क्यांकि सांसदों ने किसी धर्म की कसम नहीं उठाई। प्रश्न यह नहीं है कि कितनों ने धर्म के नाम पर कसम उठाई और कितनों ने नहीं। प्रश्न तो यही है कि राज्य ने तो धर्म के नाम पर कसम उठाने की आज्ञा दी हुई है। यह आज्ञा देना ही राज्य के अंदर धर्म का हस्ताक्षेप बनाना है। यही ही नहीं बल्कि सेना व पुलिस में धार्मिक स्थल बनाए हुए हैं। इन बलों में कार्य करने वालों को अपनी आस्था अनुसार पूजा अर्चना करने की आज्ञा होनी चाहिए। परन्तु प्रश्न यह है कि अगर किसी ने कोई पूजा करनी हो ता वे अपनी मर्जी की जगह चुन सकता है। राज्य द्वारा धार्मिक संस्थाए बनाने का विशेष उपाय क्यों? क्या यह राज्य द्वारा अपने इस महत्वपूर्ण अंग में धर्म का सीधा दखल बनाना नहीं? बिल्कुल है, सीधा स्पष्ट है। यह नहीं बल्कि विभिन्न धर्मो के विशेष दिनों पर राष्ट्रपति से लेकर प्रदेशों के मुख्यमंत्रियों तक उस धर्म के श्रद्धालुओं को ही नहीं बल्कि संपूर्ण मानवता को उस धर्म की धार्मिक शिक्षाओं या अवतारों, गुरूओं के जीवन से प्रेरण लेने का संदेश देते हैं। रामनवमी की ताजा उदाहरण है केंद्रीय और प्रदेशिक शासकों द्वारा लोगों को ऐसे संदेश देना क्या सिद्ध करता है? महाबीर जंयती वाले दिन फरीदकोट (पंजाब) के जिला न्याय अधिकारी द्वारा मांस की दुकानों को बंद रखने का आदेश देना क्या सिद्ध करता है? यह यही सिद्ध करता है कि शासन के अंदर धर्म का सीधा हस्ताक्षेप बना हुआ है और शासन धर्म को संरक्षण दे रहा है। यह स्वंभूधर्म निरपेक्षता नीति की कुछ ही उदाहरणें है।

न तो संवैधानिक पदों पर बैठे हुए लोगों को

धार्मिक संदेश (आदेश) जारी करने की कोई जरूरत नहीं होनी चाहिए थी। न ही प्रशासन को किसी के खाने पीने और किसी के रोजगार कुछ समय के लिए रोक लगाने का आदेश देना पड़ता था।

विचार बनाने व प्रकट करने की आजादी

धर्म निरपेक्षता की नीति के होते संविधान में हर नागरिक को सोचकर विचार बनाने और उन्हें प्रकट करने की आजादी बारे बात करनी भी जरूरी है।

क्या धर्म के गलत विश्वासों का खंडन करके ठीक विचार सामने ले आने के बगैर कोई मानवी प्रगति हो सकती है? बिलकुल भी नहीं अगर ईसाई धर्म के विश्वासों के अनुसार पृथ्वी को चपटी ही माना जाता रहता तो डैम नहीं बन सकते थे। इसी तरह चेचक को शीतला माता का प्रकोप माने जाने के कारण इसका इलाज संभव नहीं था। अगर मनुष्य ने धार्मिक विश्वासों के घेरे से बाहर होकर ही मंथन किया और वैक्सीन की खोज हुई, और फिर ही चेचक का इलाज संभव हुआ।

इस लिए धार्मिकता के दायरे के अंदर रहते ही विचार बनाने और उन्हें प्रकट कराने की आजादी नहीं माना जा सकता। असल में किसी भी तरह की बंदिश और भय से मुक्त रहते हुए मनुष्य के लिए विचार बनाने और उन्हें प्रकट करने के लिए आजाद वातावरण हो तो ही असली आजादी कही जा सकती है।

परन्तु असल में होता क्या है? होता यही है कि अगर कोई भी धर्म से संबंधित लिखता है उसको धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाने के दायरे में ले लिया जाता है। उसको किसी समारोह में बोलने की बात छोड़ो देश के अंदर आने व रहने तक की आज्ञा नहीं दी जाती। तसलीमा नसरीन और सलमान रुशदी की उदाहरण हमारे सामने हैं। तसलीमा नसरीन को शरण नहीं दी गई और सलमान रुशदी को राजस्थान के अंदर समारोह में बोलने के लिए देश अंदर आने तक की आज्ञा तक नहीं दी गई। क्यों? यह कह कर कि इससे धार्मिक भावनाएं भड़क सकती हैं। सरकार को चाहिए था कि धार्मिक संप्रदायों को समझाते या कानूनी तौर पर रोकती और विचारों को प्रकट करने के अधिकार की रक्षा करती परन्तु ऐसे नहीं किया गया। यह शासन की धर्म निरपेक्षता न होकर स्पष्ट तौर पर धर्म के पक्ष में खड़ा हुआ नजर आता है।

यहां तक की अपनी विचार चर्चा का निश्कर्ष यह निकलता है कि धर्म निरपेक्षता नीति धर्म के साथ संलगन हुई रहती है और यह धर्मां की पक्ष करने वाली नीति बनी रहती है इस तरह से राज धर्म पक्षपाती बन जाता है। चाहे राज्य का घोषित धर्म कोई न हो, जैसे सारे धर्म ही उसके धर्म बने रहते हैं। इस तरह धर्म राज्य अंदर और राज्य की धर्म अंदर हस्ताक्षेप करके एक दूसरे के हितों की पूर्ति करते रहना जारी रहता है।

यह तो है इस धर्म निरपेक्षता का व्ययहारिता पक्ष की असलियत। आगे इस का सैद्धांतिक पक्ष।

एक बार भगत सिंह ने सांप्रदायिक दंगों पर अपनी चिंता व्यक्त करते हुए लिखा था कि 'सरस्वती पूजा वाले दिन, सरस्वती की मूर्ति की यात्रा निकलनी जरूरी है, और...... आगे आगे बैंड बाजा बजना भी जरूरी है। परन्तु इस्लाम धर्म कहता है कि मसजिद आगे बाजा न बजे......।' आज क्या राज्य सरस्वती की मूर्ति की यात्रा के आगे बाजा बजने पर रोक लगाएगा? अगर शासन ऐसा करेगा तो हिंदू धर्म की बेअदबी बन जाएगी व अगर शासन बाजा बजने पर रोक नहीं लगाता तो यह इस्लाम धर्म की बेअदबी बन जाएगी। अगर राज्य किसी एक धर्म वालों के विरोध में कोई कदम उठाएगा तो वह निरपेक्षता की नीति पर नहीं बल्कि महात्मा गांधी वाली सर्व धर्म सम-भाव (सभी धर्मों को एक जैसा आदर) वाली नीति पर पर अमल रहा होगा। अगर राज्य मूक दर्शक बना रहेगा तो सांप्रदायक दंगे होने की संभावना है। इस तरह राज्य के लिए यह विचित्र स्थिति बन जाती है यह क्यों होता है?

क्योंकि दो विरोधियों में से कभी भी निरपक्ष नहीं रहा जा सकता। अगर यह मानकर भी बात की जाए कि धर्मों का उद्देश्य एक है, वह निष्पक्षता वाली नीति फिर भी लागू नहीं होती क्यों? एक उदाहरण लें। शेर किसी जानवर का शिकार कर रहा है, शिकार होने वाला भाग रहा है। अब यह दोनों शेर व जानवर अपने आप को जीवित रहने के एक उद्देश्य की प्राप्ति करने की कोशिश में हैं। दोनों एक प्राकृितिक नियम अपने आप को स्थापित रखने के लिए संघर्ष करने की पालना

कर रहे हैं। एक उद्देश्य है, एक नियम की पालना हो रही है। ऐसी स्थिति में भी जो मनुष्य निष्पक्षता की नीति पर अमल करेगा वह शेर की समान्य रूप से मदद कर रहा होगा। बस यही नियम धर्म निष्पक्षता पर लागू होता है। धर्मों की गिनती एक से ज्यादा होने के कारण और इससे भी बढ़कर धर्म की फिलासफी और रीति रिवाज (सरस्वती की यात्रा के आगे बाजा बजाने की रीति की मिसाल दी जा चुकी है) एक दूसरे से अलग ही नहीं बल्कि विरोधी होने के कारण धर्म प्रति निष्पक्षता की नीति लागू ही नहीं की जा सकती। अगर एक धर्म भी हो तो भी उस प्रति निरपेक्ष नहीं रहा जा सकता क्योंकि फिर गैर धार्मिक लोगों वाला विरोधी पक्ष मौजूद रहेगा। इसलिए धर्म निरपेक्षता की नीति सैद्धांतिक पक्ष से भी गलत है।

इस विचार का सार तत्व यह है कि धर्म निष्पक्षता की नीति दोनों पक्षों से सैद्धांत के तौर पर शुरू से ही गलत व लागू न होने योग्य है। सच बात यह है कि सेक्यूलरिज्म जो अर्थ पंजाबी/हिन्दी में निकाले गए और प्रचलित किए गए वे सही नहीं हैं। सही अर्थ देखने से पहले ये विचार करते हैं कि होना क्या चाहिए ?

होना क्या चाहिएः

राज्य धर्म निरपक्ष नहीं धर्म निरपेक्ष होना चाहिए। धर्म निरपेक्ष का मतलब यह है कि राज्य धर्म के आधार पर किसी से भेदभाव या मित्रता नहीं करेगा। राज्य का अपना कोई धर्म नहीं होगा। न धर्म का राज्य अंदर और न ही राज्य का धर्म अंदर कोई हस्ताक्षेप होगा। रात और धर्म पूर्ण रूप से अलग अलग होंगे। जब पंजाब सरकार ने श्री गुरू ग्रंथ साहिब के प्रकाशन के बारे में नोटिफिकेशन जारी किया था जब हमने इसलिए लिखा था कि ये राज्य का धर्म के मामले के अंदर हस्ताक्षेप है। भले ही उस समय कईयों को लगता था कि हमें इस मसले से क्या लेना है वे धार्मिक ग्रंथों के प्रकाशन तक ही सोचते थे। राज्य और धर्म का रिश्ता कैसा हो इस बारे में नहीं सोचते थे। परन्तु हम ने राज्य के धर्म अंदर हस्ताक्षेप का सिद्धांत के आधार पर बौधिक रूप से विरोध किया था।

पूर्व शिक्षा मंत्री के शिक्षण संस्थानों को पत्र जारी करके प्रार्थना समय परमात्मा के नाम लेने का विरोध हम ने इसलिए विरोध किया कि यह राज्य की ओर से गैर धार्मिक लोगों पर ही नहीं आम छात्रों पर भी जबरदस्ती धर्म को लागू करना है। राज्य की सीधे रूप में धार्मिक हस्ताक्षेप है।

अगर राज्य धर्म निरपेक्ष होगा तभी धर्म मनुष्य का नीजि मामला होगा। राज्य धार्मिक संस्थाओं व धर्म पर आधारित राजनीतिक पार्टियों को मान्यता नहीं देगा। धार्मिक संस्थाओं को मान्यता न देने के कारण वे किसी भी किस्म की जबरदस्ती नहीं कर सकेंगे। धर्म पर आधारित राजनीतिक पार्टियों की मान्यता समाप्त होने के कारण उनकी राज्य व प्रशासन के अंदर किसी भी प्रकार का हस्ताक्षेप नहीं होगा। जब भी किसी धर्म का राज्य के अंदर किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं होगा। फिर धार्मिक और गैर धार्मिक नागरिक बराबर के सम्मान के योग्य होंगे। राज्य सभी प्रकार के शिक्षण संस्थानों के अंदर एक जैसे और एक ही पाठ्यक्रम लागू करेगा। इन संस्थानों में धर्म की किसी प्रकार का कोई हस्तक्षेप नहीं होगा। मनुष्य का इमान भी धर्म के नजरिए से नहीं बल्कि समाज प्रति उसके व्यवहार व चरित्र से लागू किया जाएगा। तभी किसी एक धर्म की भावनाओं की जगह व्यक्तिगत मनुष्य की भावनाओं की ठेस पहुंचाने की बात होगी। धार्मिक और गैर धार्मिक मनुष्यों की भावनाओं का बराबर ध्यान रखना जरूरी होगा। प्रत्येक नागरिक अपने विचार बनाने व प्रकट करने के लिए बराबर का हकदार होगा। इस लिए सेक्यूलरिज्म के हिन्दी/पंजाबी में ठीक अर्थ ये बनते हैं कि राज्य, इमान, मनावीय मूल्यों, शिक्षा बगैरा धर्म से आजाद होनी चाहिए इसलिए सेक्यूलरिज्म की यही भावना प्रकट करता शब्द धर्म निरपेक्षता ही है।

क्या मौजूदा प्रबंध होते हुए यह संभव है ?

नहीं बिलकुल भी नहीं क्योंकि मानव समाज में लुटेरे प्रबंध के अस्तित्व में आने से लेकर धर्म हमेशा ही शासन करने वाली (लुटेरी) श्रेणियों के हित का, समर्थक रहा है और यही प्रबंध रहने तक समर्थक रहेगा। यह चाहे राजा को किसी परमात्मा के दूत की तरह पेश कर प्रचारित करता हो, चाहे चारों वर्णो को

अपने अपने वर्ण की ड्यूटी निभाने को धर्म की पालना का उपदेश देता रहा हो, चाहे वर्णो को र्व धर्म कहकर दुर्दशा वाली जिंदगी को किसी दैवीय शक्ति का आदेश मानते हुए सब्र से बिताने का उपदेश देता हो, चाहे अगले-पिछले जन्मों के चक्करों में डालता हो, चाहे लोगों को बुरी दशाओं को सब्र संतोष करके दिन-कटी करने का उपदेश देता हो। अंतिम बात, धर्म का रूप कोई भी क्यों न रहा हो, ये शासन करने वाली (लुटेरी) श्रेणियों के लिए ढ़ाल बनता है और आम लोगों को उनकी बुनियादी समस्याआं के हल के लिए सोचने से दूर ले जाता है। समस्याएं जो सदैव प्रबंध की पैदाईश होती है।

इसलिए धर्म-निरपेक्षता की नीति के तहत इस प्रबंध पर काबिज श्रेणियां पर्दे के पीछे से धर्म को हर किस्म की सीधी व गुप्त मदद कर प्रफुलित करती रहती हैं।

इसलिए मौजूदा प्रबंध के होते धर्म-निरपेक्ष की नीति लागू होना संथव नहीं। जब मौजूदा प्रबंध के होते धर्म-निरपेक्षता संभव नहीं तो हम ऐसी मांग क्यों करते हैं? इस सवाल का जवाब है कि जब हम बात लोगों में लेकर जाएगें तो उनकी इस संबंधी जागरूकता बढ़ेगी कि यह लुटेरा गुट अपना राज्य प्रबंध कायम रखने के लिए उन्हें धर्म के आधार पर इस्तेमाल कर रहा है। इस के अलावा उनमें यह जागृति भी आएगी कि वे धर्म की भाई-मार लड़ाई में शामिल होने के स्थान पर अपनी मूलभूत समस्याओं के समाधान के लिए एकजुट होकर सोचेंगे, इसलिए भगत सिंह ने लिखा थाः

''आपका भला इसी में है कि आप सर्व धर्म. ...... के भेदभाव मिटाकर इक्ट्ठे हो जाएं और हकूमती ताकत को अपने हाथों में लेने का प्रयत्न करें।''

जब लोग ये सोचने लगेंगे और इसी ओर चलेंगे तो वे शासन को ही नहीं बल्कि समाज को भी धर्म-निरपेक्ष बनाने की तरफ कदम बढ़ाएंगे। बस यह विचारधारा को घुमाने का ध्यान रखते हुए तनदेही व दृढ़ता, हलीमी व सहनशीलता और दलील पूर्वक प्रेरणा से यत्न जुटाने चाहिए।

राज्य(State) प्रारंभिक मानवीय समाज में पैदावारी स्त्रोतों व साधनों पर किसी व्यक्ति विशेष या समूह का निजी अधिकार नहीं था। इसलिए तब तक किसी किस्म की हकूमत और कानून आदि भी नहीं थे। परन्तु एक पड़ाव पर आकर जब पैदावारी स्त्रोतों व साधन निजी संपत्ति बन गए तो समाज दो विरोधी (दुश्मन) श्रेणियों में बंट गया। एक साधन संपन्न व दूसरा साधनहीन। साधन संपन्न, साधनहीन मेहतकश जमात की कमाई लूट पर जीने लग गए हैं, इस तरह से दो विरोधी जीवन दशाएं बन गई। कामचोर व ऐश करने वाली जमात और कमाने वाली व रेंग रेंग कर जिंदगी बिताने वाली जमात। साधन संपन्नों के लिए अपनी लूट जारी रखने के लिए व मेहनतकश जमात के विरोध को दबाकर रखने के लिए एक मशीन बनाने की जरूरत खड़ी हो गई। इसी जरूरत की पूर्ति के लिए शासन जैसी संस्था खड़ी हो गई जैसे आज संसद, कानून, सेना, पुलिस, न्यायपालिका, कार्यपालिका, खुफिया तंत्र और अफसरशाही इत्यादी हैं।

सारांशः शासन(State) एक जमात से दूसरी जमात को दबाने की मशीन है। यह मेहनतकश लोगों, जो आबादी की विशाल बहु सम्पत्ति होते हैं, को दबाने का एक जरिया हैं। अगर मजदूरों का शासन भी आ जाए तो वो भी सरमाएदारी व तानाशाही होगी। सो जब तक शासन की जरूरत व अस्तित्व रहेगा उतनी देर यह किसी न किसी जमात के हितों की ही पूर्ति करती रहेगी। इसलिए शासन का अंत निजी जायदाद के सार्वजनिकता के साथ ही बंधा हुआ है।

जमात क्या होती है? आबादी का वो समूह जिस के हित सांझे हों जमात कहलाती है।

अनमोल वचनः

1. ''सफलता एक मंजिल है, साहस मंजिल की सड़क और अवसर सड़क के किनारे छाया करने वाले वृक्ष है।''

ओ. हैनरी

2. ''मनुष्य के लिए जीवन में सफलता का रहस्य हर आने वाले अवसर के लिए तैयार रहना है।''

डिजरायली

अन्धविश्वास के चलते

अब भी कायम हैं परंपराएं 15 साल बाद वापस लिया

रूढ़िवादी परंपराएंः बीमारी की आशंका में बच्चों को किसी लोहार, घासी परिवारों को बेच देते हैं।

रूद्रदामन पाठक/भूपेंद्र सिंह। जशपुर/अंकिस

एक दंपती ने अपने बेटा-बेटी को 15 साल बाद वापस पाया। उन्होंने गांव में प्रचलित एक रूढ़िवादी प्रथा को मानते हुए दोनों को एक लोहार परिवार में बेच दिया था। गांव में विधिवत कार्यक्रम हुआ। इसमें दंपती ने बिक्री मुआवजा वापस कर बेटा-बेटी को वापस पा लिया।

यह मामला फरसाबहार ब्लॉक के ग्राम अंकिरा का है। वहां के निवासी मनमोहन सिंह ने अपने पुत्र पंकज को महज 4 वर्ष एवं पुत्री राखी को 3 वर्ष की उम्र में गांव के ही हेमलाल लोहार परिवार के पास बेच दिया था। मनमोहन ने 18-19वर्ष पूरा होने पर रविवार को अपने पुत्र-पुत्री पर पूरा अधिकार प्राप्त किया। दरअसल जिले के कई गांवों में यह रूढ़िवादी परम्पराएं अब भी कायम है। अगर बच्चे पैदा होते ही बीमार पड़ने लगते हैं। काफी इलाज के बाद भी बीमारी की आशंका बनी रहती है, तो ऐसे बच्चों को ग्रामीण किसी लोहार, घासी जैसे परिवारों के पास बेच देते हैं। बच्चों के जवानी की दहलीज पर कदम रखते समय सारी रस्म अदा कर उन्हें मुक्त कराया जाता है। बच्चों को खरीदते समय खरीददार मुख्य मुल्य के रूप में बच्चें को चमड़े का तावीज पहनाता है। यह तावीज बच्चों के मुक्त होने तक बंधा रहता है। तब से हर धार्मिक त्योहारों में अपना हक अदा करते हुए अपने बच्चों की तरह उसे नए कपड़े पहनाता है। साथ ही पकवान खिलाकर साथ में त्योहार मनाता है। हालांकि बिकने के बाद भी बच्चे इस अवधि में अपने ही घर में रहकर जीवन यापन करते हैं। पर उन पर ज्यादा अधिकार खरीददार का रहता है।

उत्सव जैसा होता है माहौल

बच्चों को मुक्त कराते समय शादी-विवाह जैसा उत्सव का माहौल रहता है। इसमें बच्चों के माता-पिता खरीददार परिवार को यथा संभव धान, चावल कपड़ा बर्तन सहित अन्य आवश्यक वस्तुएं देकर कर्ज से मुक्त होते हैं। कार्यक्रम में पुरोहित के मंत्रोच्चार के साथ विधिवत पूजा करता है। इसमें माता पिता बच्चों को प्राप्त करते है। हालांकि यह काफी अच्छे माहौल में होता है। पर इसके बावजूद इस दौरान खरीददार परिवार के बच्चों के प्रति अपने लगाव और प्रेम को छिपा नहीं पाता और यह प्रेम आंसू बनकर आंखों में छलक आता है जिले के कई हिस्सों में बच्चों का खराब नाम रखने की भी परंपरा है। अगर किसी के घर में बच्चे पैदा होने के बाद बीमारी से मर जाते हैं। ऐसे परिवार बच्चे का जन्म होने के बाद बच्चों का भोंकना राम, भिखार, फेंकवा, कंदरी आदि जैसे खराम नाम रख देते हैं। इसके पीछे उनका मानना है कि ऐसा नाम रखने से बच्चों को किसी की नजर नहीं लगेगी और वे स्वस्थ रहेंगे।

100 से भी अधिक बच्चे खरीद चुके हैं हेमलाल

गांव के हेमलाल लोहार ने भास्कर को बताया कि मान्यता के अनुसार यह कार्य हमारे परिवार में कई पीढ़ियों से किया जा रहा है। वे स्वयं 100 से ज्यादा बच्चे खरीद चुके हैं। इसमें से 20-25 बच्चे अब भी वापस करना बाकी है। उनके द्वारा खरीदे गए सभी बच्चे स्वस्थ एवं तंदुरूस्त हैं। हेमलाल ने कहा कि यह जानते हुए कि बच्चा अपने माता-पिता के पास एक दिन जाएगा ही, उसके बावजूद वे उन्हें अपने सगे बच्चों जैसा प्यार देते है। यही वजह है जब बच्चो को वापस करने का समय आता है, तो दिल भर आता है। उन्होंने कहा कि यह कार्य तो धर्म से जुड़ा है, चलता रहेगा।

दैनिक भास्कर, 27-05-2013

बच्चों का कोना

स्वयं आक्सीजन बनाओ

यह तो तुम जानते ही हो कि पौधे सूरज की रोशनी में कार्बन-डाई-आक्साइड लेकर आक्सीजन छोड़ते रहते है।यहां जो प्रयोग करने की विधि बतायी जा रही है, उससे यह बात तो सिद्व हो ही जाएगी, साथ ही तुम आक्सीजन भी एकत्रित कर लोगे अपने लिए।

सबसे पहले बर्तन को पानी से भरकर उसमें जलीय पौधा डाल दो।इस पौधे के ऊपर अपनी कांच की कीप उलटकर रखो और फिर टैस्ट टयूब में पानी भरकर उसे भी कीप के ऊपर इस प्रकार उलट दो, ताकि उसका पानी बह न जाए। इस पूरे उपकरण को तेज धूप में किसी मेज़ आदि पर रख दो। ध्यान से देखोगे तो तुम्हें नीचे से उठते हुए गैस के छोटे-छोटे बुलबुले स्पष्ट नजर आएंगे जो टैस्ट टयूब में भरे पानी को हटाकर ऊपर इकटठे होते करके यह गैस टैस्ट टयूब से सारा पानी हटाकर वहां एकत्रित हो चुकी होगी।

दियासलाई की एक तीली निकालकर जलाओ और की एक तीली निकालकर जलाओ और फिर फौरन इसे बुझा दो। जानते हो क्या होगा? कुछ देर तीली सुलगती रहेगी।अब टैस्ट टयूब का मुंह अंगूठे से बंद करो तथा उसे पानी से निकालकर सीधा कर लो और फिर उसके ऊपर से अंगूठा हटाकर आधी सुलगती तीली टैस्ट टयूब में डाल दो। सुलगती हुई तीली एक दम आग पकड लेती है, जो इस बात का सबूत है कि टैस्ट टयूब में एकत्रित गैस आक्सीजन ही है।

अपना साधारण सैल

लकड़ी के टुकड़े के एक और तांबे की व दूसरी और जिंक की प्लेट एक पेंच के सहारे कस दो और साथ ही तार के दो टुकड़ों के एक एक सिरे भी।देख लेना कहीं ऐसान हो कि पेंच कसने पर उनके सिरे आपस में एक दूसरे को छू जाए बर्ना समझो हो गया बण्टाधार। लकडी के टुकडे को सल्फ्यूरिक अम्ल जो भरी जैम की बोतल के मंहु पर इस प्रकार रखो ताकि दोनों प्लेटें अम्ल में डूबी रहे। अम्ल जो तुम्हें किसी कैमिस्ट के यहां से मिल जाएगा के प्रयोग में सावधानी बरतने की जरूरत है, क्योंकि यदि यह तुम्हारे शरीर के किसी अंग पर गिर गया तो वहां कि त्वचा को जला सकता है।

अम्ल में डूबी हुई तांबे व जिंक की प्लेटें व उनसे जड़े तार का यह रूप ही तुम्हरा साधारण सैल है। हां, यह बात अलग है कि इससे इतनी विद्युत धारा पैदा नहीं होती कि कोई बल्ब जलाया जा सके, पर यदि तुम तार के दोनों सिरों को अपनी जबान पर रख लो तो तुम्हें एक विशेष प्रकार की सनसनाहट सी अनुभव होगी, जो यह सिद्ध करती है कि सैल विद्युत उन्पन्न कर रहा है। चाहे वह कितनी ही हल्की शक्ति की क्यों न हो।

विद्युत चुंबक

अपने घर में विद्युत चुंबक बनाना कितना आसान काम है, यह शयाद तुम सोचे भी नही सकते होगे। किसी भी लोहे की छड़ जैसे कोई बोल्ट या कील के ऊपर कुछ मीटर इंसुलेटड कापर का तार लपेटते जाओ ओर अंत में तार के दोनों सिरों पर से लगभग 6 सेमी. तक का इंसुलेशन खरच उतार दो। इन दोनों सिरों को बैटरी के दोनों टरमिनल्स से जोड़ो और फिर देखा जरा! जैसे ही इस बोल्ट को लोहे की कील या पेपर क्लिप जैसी छोटी -छोटी वस्तुओं के करीब लाओगे इसके अंदर को चुबकीय गुण तुम्हें स्पष्ट नजर आ जाएगा , क्योंकि ये वस्तुए खिंचकर बोल्ट से जा चिपकेंगी और मजेदार बात

तर्कशील हलचल

जलालाना में जागरूकता कैंप का आयोजनः

गत 1 दिसम्बर 2013 को गांव जलालाना जिला सिरसा में तर्कशील सोसायटी पंजाब द्वारा रजिस्टर्ड इकाई कालांवाली के प्रयासों द्वारा एक कैंप का आयोजन किया गया।

जिसमें मास्टर अजायब जलालाना व शमशेर चोरमार के निमंत्रण पर राहत- The Relief Psychological Guidance & Counseling Center Sirsa के मनोवैज्ञानिक कांउसलरस राजेन्द्र जोधपुरिया व रण सिंह राज को बुलाया गया। समयानुसार कैंप शुरू हुआ और ग्रामीणों ने बारी-बारी से अपनी परेशानियां रखी जिसमें मुख्य रूप से सिर दर्द, बी.पी. बढ़ना, तनाव, चिंता, अवसाद तथा बच्चों की परेशानियां- स्कूल न जाना, याद न रहना, पढ़ाई में कमजोर होना, गुमसुम रहना, अंगुठा चूसना, होमवर्क न करना तथा अन्य कई बछोटे होते बच्चों की परेशानियां सामने आई।

कुछ नौजवानों ने नशे की लत के चलते कैंप में मनोवैज्ञानियों के सामने नशे की समस्या रखी। मनोवैज्ञानियों द्वारा बारी-बारी से सभी समस्याग्रस्त (50 ग्रामीणों) इलाज के लिए प्रभावी मनोवैज्ञानिक टिप्स दिये।

इस मौके पर गांव के मुख्य व्यक्ति करनैल सिंह, मास्टर दर्शन सिंह, मलकीत सिंह, गुरसंगीत व काका सिंह मौजूद थे। सभी ग्रामीणों ने तर्कशील इकाई के इस प्रसार के लिए तर्कशील इकाई के प्रधान अजायब सिंह व शमशेर सिंह का आभार प्रकट किया तथा भविष्य में अन्य कार्यक्रम लाने की पेशकश की।

नास्तिक केन्द्र की कौस्तुभ जयन्तीः

इस बेधड़क नाम से पुकारे जाने वाले संसार के पहले नास्तिक केन्द्र, विजय वाड़ा (आंध्र प्रदेश) की स्थापना की 75वीं वर्षगांठ के अवसर पर नास्तिक मानव-वादियों, विवेकवादियों और धर्मनिरपेक्ष मुक्त विचार का एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन सम्पन्न हुआ। अध्यक्षता अन्तर्राष्ट्रीय नैतिक मानववादी संघ के अध्यक्ष, नार्वे के लेवी फ्रगलने और उद्घाटन हैदराबाद के सैन्टर फरिसेल्युलर अण्ड मोलीक्यूलिक बायोलोजी के निदेशक प्रख्यात वैज्ञानिक डॉ.पी. ऑम, भार्गव ने की। डॉ. भार्गव ने कहा कि संसार में हुए ज्यादातर अत्याचार धर्म के नाम पर किये गये हैं और यदि मठों और मंदिरों में केन्द्रित धन का उपयोग जनहित में किया जाय तो इस देश को भूख, कुपोषण और रोगों से मुक्त किया जा सकता है। लेवी फ्रेगेलन ने कहा कि नास्तिक लोग धर्म से नफरत नहीं करते। हम केवल धर्मो द्वारा गलत धारणाओं को तथ्यों के रूप में प्रस्तुत करने की आलोचना करते हैं। सम्मेलन में जर्मन मानववादी और मुक्तविचारक वोकर मुलर, अन्तर्राष्ट्रीय मानववादी संघ के कोषाध्यक्ष रोअर जानसन, फ्रेंच मुक्त विचारक संघ के महासचिव डेविड गोज़लान के अतिरिक्त भारतीय विवेकावादी परिसंघ (फईरा) के अध्यक्ष नरेन्द्र नायक, लोकसभा पार्टी के संस्थापक डॉ.जयप्रकाश नारायण पेरियदि विश्वविद्यालय, चेन्नई के कुलपति डॉ.के.वी. रामणि, उड़ीसा विवेकवादी संघ के अध्यक्ष डॉ.धनेश्वर साहू मानवीय समाज के संस्थापक, प्रगतिशील लेखक डॉ. रणजीत, कोज़ी कोड के वैज्ञानिक वैज्ञानिक हमीद और जब्बदि, हैदरावादि वैज्ञानिक और समाजक डॉ. चन्दना चक्रवर्ती, आंध्रमुक्त विश्वविद्यालय के पूर्व उप-कुलपति चन्द्रशेखर राव, नागार्जुन विश्वविद्यालय के उपकुलपति बाला मोहन दास, गांधीवादी समाजक किसान आंदोलक श्री राजगोपाल तथा नास्तिक केन्द्र विजयवाड़ा के संस्थापक श्री गोरा के परिवार के लवषास, विजयम, मैत्री विद्या (पूर्व सांसद) रामजी सिंह, पूर्व सांसद, भागलपुर आदि अनेक महत्वपूर्ण हस्तियों ने अपने विचार व्यक्त किये। पंजाब की तर्कशील सोसायटी के बीस के करीब सिख सदस्यों की सहभागिता ने सम्मेलन को एक नया ही रंग दे दिया।

तर्कशील सोसायटी हरियाणा की द्विमासिक बैठक सम्पन्नः

तर्कशील सोसायटी हरियाणा की द्विमासिक बैठक 12 जनवरी को जाट धर्मशाला में आयोजित हुई। बैठक की अध्यक्षता 'तर्कशील पथ' के संपादक मा. बलवन्त सिंह ने की। संचालन महासचिव गुरमीत सिंह ने किया। परिचय के उपरांत बलजीत भारती ने सोसायटी के संगठन के बारे में बताया। विजय कुमार ने 'तर्कशीलता क्यों जरूरी है' पर अपनी बातचीत

रखी। सुभाष तितरम ने 'तर्कशीलता और आत्मविश्वास' विषय पर अपनी बात रखी। आर.पी.गांधी ने विभिन्न प्रकार के अंधविश्वासों के बारे में विस्तार से बताया। मा.बलवन्त सिंह ने पत्रिका के विकास बारे कार्य योजना पर बात रखी। महासचिव गुरमीत सिंह ने सदस्यों का आह्वान किया कि वे और अधिक सक्रियता से अपनी भागीदारी बढ़ाएं। तत्पश्चात सदस्यों की शंकाओं के उत्तर दिये गए। चर्चा में उपरोक्त के साथ-साथ गोरा सिंह, कृष्ण राजौंद व लक्ष्मी आनंद ने भी भाग लिया।

एन.एस.एस. कैम्प में तर्कशील कार्यक्रमः

दिनांक 2 जनवरी 2014 को रा.व.मा.विद्यालय अधोया, जिला अम्बाला में एन.एस.एस. के शिविर में 'चमत्कारों का पर्दाफाश कार्यक्रम का आयोजन किया गया। कार्यक्रम के आरम्भ में नये बने तर्कशील साथी बलजिन्द्र सिंह लैक्चरार ने आंखों पर पट्टी बांध कर स्कूल के प्रांगण में मोटरसाईकिल चलाया।

बाद में बलवन्त सिंह लैक्चरार ने जादू विभिन्न ट्रिक दिखा कर विद्यार्थियों को उनके रहस्यों के बारे में समझाया। इसके साथ-साथ उन्होंने तर्कशील सोसायटी के उद्देश्यों तथा सोसायटी द्वारा दुनियाभर के देव पुरुषों, संतों, बाबाओं, मुल्ला-मौलवियों एवं ज्योतिषियों के समक्ष रखी गई लाखों रुपयों की चुनौती के बारे में विस्तार से समझाया। उन्होंने विद्यार्थियों से अंधविश्वास मुक्त समाज का निर्माण करने के लिए अपना योगदान देने की भी अपील की।

इस कार्यक्रम में प्राध्यापक बलविन्द्र सिंह विर्क एवं प्राध्यापक नरेश कुमार वर्मा ने विशेष रूप से सहयोग किया।

रा.व.मा.विद्यालय इस्माईलाबाद (कुरुक्षेत्र में चमत्कारों का पर्दाफ़ाश कार्यक्रमः

दिनांक 18-12-2013 को रा.व.मा.विद्यालय इस्माईलाबाद जिला कुरुक्षेत्र में एक तर्कशील कार्यक्रम पेश किया गया। कार्यक्रम की शुरूआत मा.सुरेन्द्रपाल द्वारा आंखों पर पट्टी बांधकर मोटरसाईकिल चलाने के साथ हुई।

उसके पश्चात् बलवन्त सिंह लैक्चरार ने जादू के विभिन्न ट्रिक दिखा कर विद्यार्थियों का मनोरंजन किया तथा बाद में ट्रिकों की वैज्ञानिक व्याख्या करके विद्यार्थियों के मनों से अंधविश्वास निकाल फैंकने का प्रयत्न किया।

जादू के ट्रिक दिखाने के साथ-साथ बलवन्त सिंह ने तर्कशील सोसायटी हरियाणा की चुनौती एवं उद्देश्यों के बारे में विस्तार से चर्चा की।

कार्यक्रम के अंत में विद्यालय के प्रधानाचार्य श्री रामकरण जी ने तर्कशील सोसायटी हरियाणा द्वारा समाज में फैले अंधविश्वासों एवं कुरीतियों को समाप्त करने के लिए तर्कशील सोसायटी द्वारा किए जा रहे प्रयत्नों के लिए तर्कशील सोसायटी कार्यकर्त्ताओं को बधाई दी। उन्होंने विद्यार्थियों का आह्वान किया कि वे प्रत्येक घटना के कारणों को समझ कर ही अपना निर्णय करें।

तर्कशील सोसायटी उत्तरी अमेरिका का वर्ष 2014 कार्यक्रम का कैलण्डरः

उत्तरी अमेरिका की तर्कशील सोसायटी, आंटारियो की बैठक में वर्ष 2014 में करवाए जाने वाले कार्यक्रमों की रूप रेखा तैयार कर ली गई।

1. प्रथम कार्यक्रम 2 मार्च 2014 को क्रिस गिब्सन रीक्रियेशन सैंटर में महिला दिवस को समर्पित होगा। इसमें महिलाओं से संबंधित मुद्दों पर विचार-विमर्श किया जाएगा।
2. दूसरा कार्यक्रम 6 अप्रैल को साऊथ फलैचर स्पोर्टस प्लैक्स में श.भगत सिंह, राजगुरु व सुखदेव की शहादत की स्मृति में किया जाएगा।
3. 24 जुलाई को तर्कशील सदस्यों के लिए पिकनिक के तौर पर मनाया जाएगा इसमें सोसायटी के सांस्कृतिक कार्यक्रमों में शामिल होने वाले कलाकारों तथा वित्तीय सहायता प्रदान करने वाले साथियों को विशेष बुलावा दिया जाता है।
4. 24 अगस्त 2014 को पियरसन थियेटर में नाटक मेला करवाया जाएगा।

उत्तरी अमेरिका की तर्कशील सोसायटी के संपर्क सूत्रः-

1. बलजिन्द्र सिंह सेखों- फोन नं.- 90578-11197
2. नछतर विदेशा - फोन नं.- 64726-73397

केस रिपोर्ट

रहस्यमयी हमलावर पकड़ा गया

बलवन्त सिंह प्राध्यापक

जब वक राहुल को मेरे पास लेकर आए तो उसके शरीर की हालत काफी खराब थी। उसके शरीर पर कई जगह पर गहरी खरोंचों के निशान थे। कई खरोंचें तो काफी गहरी थी तथा उनमें गहरे जख्म हो गए थे। मेरे पूछने पर उसके पिता ने जानकारी दी कि कई बार रात को सोते समय इस पर कोई चीज हमला कर देती है, जब यह चिल्ला कर उठता है तो चारपाई पर यह अकेला होता है और घायल हुआ पड़ा होता है। हम आस-पास सभी जगह पर जा कर टार्च जला कर भी देखते हैं परन्तु कहीं भी कोई भी नहीं होता। उसके बाप ने यह भी बताया कि उनके गांव के आस-पास कहीं भी कोई जंगल भी नहीं है कि कोई जंगली जानवर ही हमला करता हो। उसका पिता गांव में साईकिल मुरम्मत की दुकान करता है और राहुल भी उसी के साथ दुकान पर कार्य करता है।

अंधविश्वासी होने के कारण वे उसके कई बाबाओं, तान्त्रिकों व पीरों की चौकियों पर ले गए। उनमें से किसी ने प्रेतात्मा किसी ने जिन्न तथा किसी ने पीर की पकड़ बता दी। बाबाओं के पास चौकियां भरते हुए काफी खर्च करने के बाद समस्या और भी बढ़ती चली गई। जब डाक्टरों से इलाज करवाया तो राहुल और अधिक तंग हो गया। किसी परिचित से मेरा पता लेकर व उसे मेरे पास ले आए।

पहले तो मैंने उसे किसी डाक्टर के पास ले जाने की सलाह दी, परन्तु उनके द्वारा अनुरोध करने पर मैंने तार्किक दृष्टिकोण से उसे परखना शुरू किया। सर्वप्रथम मैंने उसके पिता से कुछ आवश्यक जानकारियां प्राप्त की और फिर राहुल के साथ अकेले में बात-चीत करनी शुरू की। महत्वपूर्ण बात यह थी कि राहुल पर घर के अन्दर ही हमला होता था और वह भी जब वह घर में अकेला हो, तब ही हमला होता था। ज्यादातर तो उस पर हमला रात के समय ही होता था और आश्चर्यजनक बात यह थी कि घर के सभी सदस्य भी उसके आस पास ही चारपाईयों पर सोते थे। जब वह जख्मी होने पर चीखता चिल्लाता तो घर वाले लाईट जला कर तथा घर से बाहर दूर तक टार्च जला कर भी देख कर आते। परन्तु उन्हें किसी प्रका का कोई जानवर इत्यादि कभी भी नहीं दिखाई दिया।

अकेले में जब मैंने उस के साथ पूछताछ शुरू की तो वह कोई सहयोग नहीं दे रहा था। मेरे द्वारा सवाल करने पर वह बात को इधर उधर घुमा देता था। फिर मैंने अनायास ही उससे पूछ लिया कि क्या तुम्हारी शादी हो गई है? इस पर वह एक दम भड़क उठा, ''बापू मेरी शादी की बात करता ही नहीं, उसे तो मेरी बहन की शादी की ही चिन्ता है।'' उसकी इस बात से मुझे एक सूत्र मिल गया और मैंने अपनी बात चीत की दिशा शादी-ब्याह की बातों की ओर मोड़ दी। इससे वह अत्यन्त उत्सुक हो उठा तथा बातचीत में पूरा सहयोग देने लगा। मैंने उसे प्रेरित कर दिया कि यदि वह मेरी बात मानता रहेगा तो मैं उसके पिता से कह कर उसकी शाादी उसकी बहन से पहले करवा दूंगा। इस पर हर बात मानने को तैयार हो गया।

उचित अवसर देखकर मैंने उसे चारपाई पर लिटा दिया और सम्मोहित करना शुरू कर दिया। थोड़ी ही देर में वह गहरी सम्मोहक निद्रा में चला गया। सम्मोहन अवस्था में मेरी बातचीत के प्रभाव में उसने अपने अवचेतन मन की परतें खोलनी शुरू

कर दी। उसने बताया कि 'उसके घर वाले उसकी छोटी बहन की शादी की बात तो हर जगह चलाते हैं परन्तु मेंरी शादी के बारे में कोई बात ही नहीं करता।' जब से घर वाले उसकी बहन की शादी की बात चलाने लगे तब से सपने में उसे एक लड़की दिखाई देने लग गई। स्वप्न अवस्था में पहले तो वह लड़की उसके पास आ जाती, परन्तु पास आकर वह अपने लम्बे-लम्बे नाखुनों द्वारा उसे जख्मी कर देती। जब वह चिल्ला कर उठ बैठता तो वहां पर कोई लड़की नहीं होती, परन्तु उसके शरीर पर नाखुनों की खरोंचों के निशान होते तथा कई बार उन जख्मों से खून भी रिस रहा होता।

सम्मोहन अवस्था में ही मैंने उसके मन में बैठे लड़की के मनोभ्रम को दूर कर दिया तथा उसे अहसास दिलाया कि उसके शरीर को जख्मी वह लड़की नहीं करती थी बल्कि वह स्वयं ही अवचेतन अवस्था में अपने ही नाखुनों द्वारा अपने शरीर पर खरोंचें मार लेता है। उसके मन पर सार्थक प्रभाव डालने पर उसने स्वीकार किया कि वह स्वयं ही अपने हाथों से अपने शरीर को जख्मी करता था। सम्मोहक नींद से जगाने पर मैंने उसे दिखाया कि जहां पर उसके शरीर पर उसके हाथ पहुँच सकते हैं केवल वहीं पर ही जख्मों के निशान हैं। वह मेरी बात से सहमत हो गया तथा उसने विश्वास दिलाया कि आगे से वह कभी भी अपने शरीर को जख्मी नहीं करेगा।

कारण :- राहुल थोड़ा मोटे दिमाग का लड़का है। वह ठीक ढंग से पढ़ लिख भी नहीं सका था। पढ़ाई में उसकी रूचि न होने के कारण उसके पिता ने उसे अपने साथ साईकिलों की दुकान पर काम में लगा लिया। अब उसकी आयु लगभग 20-22 वर्ष तथा उसकी छोटी बहन की आयु 18-19 वर्ष की हो चुकी थी तो हमारे समाज की परम्परा के अनुसार उसके मां-बाप ने अपने रिश्तेदारों में लड़की के लिए अच्छा वर ढूंढ़ने की बातचीत शुरू कर दी। राहुत में पुरूष हार्मोन कुछ ज्यादा ही सक्रिय थे, वह हर समय अपनी शादी के बारे में ही सोचता रहता था। अब जब उसके मां-बाप ने उसकी बहन के रिश्ते की बात चलानी शुरू कर दी तो यह सुन कर उसे अत्यधिक गुस्सा आना शुरू हो गया। इसी कारण दुकान पर काम करते समय वह अपने से अत्यधिक क्रोधित हो जाता।

वैज्ञानिक चिन्तन के अभाव में उसके घर वाले उसे बाबाओं व पीरों की चौकियों पर ले जाने लगे। बाबाओं में से किसी ने उस पर प्रेतात्मा का साया, किसी ने जिन्न का प्रकोप, किसी ने पीर की पकड़ बता दी। परन्तु हल कोई वे कर नहीं सकते थे, अतः वह और अधिक उदण्ड व तंग होता चलता गया।

मैंने सम्मोहन अवस्था में राहुल को उचित निर्देश दिये तथा साथ ही यह भी समझाया कि यह हमारे सारे समाज की परम्परा है कि सभी मां-बाप लड़के की बजाए पहले लड़की की शादी करने की चिंता करते हैं। ऐसा करके उसके मां बाप ने उसके साथ कोई अन्याय नहीं किया है, बल्कि यह उसका फर्ज है कि वह भी पहले अपनी बहन की डोली विदा करे तथा बाद में अपनी शादी के बारे में सोचे। मेरे निर्देशों का उस पर सार्थक प्रभाव पड़ा तथा उसने विश्वास दिलाया कि अब वह पहले अपनी बहन की डोली विदा करेगा फिर वह अपनी शादी करवाए गा।

उसे पश्चात् मैंने उसके पिता को अपने पास बुलाया तथा उसे समझाया कि वे अपनी लड़की के रिश्ते की बात करते समय राहुत के रिश्ते की बात भी कर दिया करें। यदि दोनों का रिश्ता मिल जाए तो दोनों भाई-बहन की शादी एक साथ ही कर दें।

उसके बाद कभी किसी रहस्यमयी हमलावर ने राहुल पर कोई हमला नहीं किया।

हत्या

आर.पी. गान्धी, M. 93154-46140

मनुष्य ने अपने हित और अहित को सम्मुख रख कर किसी भी घटना को अलग-अलग नाम दिए हैं। उदाहरण के लिए 1857 के पहले स्वतन्त्रता-संग्राम को अंग्रेजों ने विद्रोह का नाम दिया। अगर वे इसे विद्रोह का नाम न देते तो उन्हें जनता की हत्या करने में कठिनाई आती। इसे विद्रोह का नाम देकर लाखों भारतीयों को मौत की नींद सुला दिया। इलाहाबाद में अनेक लोगों को गले में रस्सी का फंदा डालकर पेड़ों पर लटका दिया गया परन्तु भारतवासी आज भी उस आन्दोलन को स्वतन्त्रता-संग्राम का नाम देते हैं। कारण दासता का फंदा भारतीयों के गले में पड़ा हुआ था जिसे वे यथा शीघ्र उतार फैंकना चाहते थे परन्तु अंग्रेजी साम्राज्य के लिए भारतीयों द्वारा चलाया गया आंदोलन अहित में था इसलिए अंग्रेजी सरकार ने इसे विद्रोह का नाम देकर मनमर्जी की और अत्याचार ढहाए। ऐसे ही एक घटना मुगलों के अंतिम बादशाह बहादुर शाह जफ़र के साथ जुड़ी है। लाल किला में बहादुर शाह पर जब मुकद्मा चलाया जा रहा था तो उसने अपने बयान में कहा था कि हमें विद्रोही कहना या मानना सिद्धान्त रूप में गलत है। उसने अपनी दलील में सबूत देते हुए कहा अगर मैं रानी विक्टोरिया के बर्मिंघम महल पर हमला करू तो वह बचाव के लिए सामने आती है तो क्या वह विद्रोही कहलाएगी? तुमने जो फैसला लेना था वो ले ही चुके हो। यह सब कुछ दिखावे के लिए किया जा रहा है, इससे अधिक कुछ नहीं। दूसरी ओर अंग्रेजों के अत्याचार की सीमा देखिए कि अंग्रेजों ने बहादुर शाह को हुमायऊं के मकबरे में कैद कर रखा था और उसके नाश्ते के लिए एक थाल में सजाकर उसके शहजादों के सिरों को रेशमी रूमाल से ढक कर पेश किया गया। आप जरा स्वयं ही सोचिए कि एक बाप के सामने उसके बच्चों के सिर थाली में भेंट किए जाए तो उस बाप के दिलो-दिमाग पर क्या गुजरेगी?

अंग्रेजी साम्राज्य में उन दिनों लाखों हत्याएं की गई लेकिन उन पर किसी हत्या का केसा नहीं चला जबकि एक हत्या करने पर ही कचहरियों के चक्कर काटते-काटते जूते घिस जाते हैं। देश विभाजन के समय 1947 में लगभग 10 लाख हत्याएं की गईं। यह सब धर्म के नाम पर हुआ। मगर किसी पर भी हत्या का दोषी मानकर हत्या का मुकद्मा नहीं चला। बच्चे, बूढ़े और महिलाओं का भी ध्यान नहीं किया गया। बच्चे को टांग से पकड़ कर बड़ी निर्दयता से दीवार पर मार दिया जाता था। हत्यारों का न दिल पर असर होता न हाथ-पांव पर। न ही किसी को कोर्ट-कचहरी की खाक छाननी पड़ी। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनों तरफ महिलाओं की आबरू तार-तार की गई। लाहौर शहर में कितनी ही द्रोपदियों को निर्वस्त्र कर जलूस निकाला गया परन्तु कोई भी कृष्णा साड़ी लेकर न पहुंचा। स्त्रियां दया की भीख मांगती रही परन्तु वे निर्मोही उनकी बेबसी की खिल्ली उड़ाते। इधर अमृतसर शहर में अल्लाह की बेटियों के साथ लाहौर की कहानी दोहराई गई। परन्तु न किसी अल्लाह को रहम आया और न करम हुआ; न ही किसी मनुष्य का मन पसीजा। उनकी चीखो-पुकार को कोई सुनने वाला न था। पाकिस्तान की तरफ से हिन्दुओं के सिर काट कर लाश में बदल दिया गया और उन लाशों से भरी गाड़ी नें हिन्दुस्तान में प्रवेश किया तो उसका असर यह हुआ कि हिन्दुस्तान में भी वही बात मुसलमानों के साथ दोहराई गई और उसी प्रकार लाशों से भरी गाड़ी पाकिस्तान पहुंची। बदले की आग लाखों जिन्दगियों को निगल गई। ये अत्याचार करने वाले अपने आप को योद्धा समझते थे। इन अत्याचारियों पर हत्यारा होने का कोई मुकद्मा न चला।

अगर हम मानव इतिहास के पन्ने पलटें तो दुनिया के हर हिस्से में इन्सानी लाशों के अम्बार लगाए गए परन्तु किसी पर भी हत्या का मुकद्मा न चला। वियतनाम में 12 वर्ष तक अमरीका के साथ युद्ध चला। 40 लाख लोग मौत की नींद सुला दिए गए। हजारों लड़कियां वैश्याएं बना दी गई। इनके यतीम बच्चों का लालन-पालन अमरीका के यतीम खानों में हुआ। असीम अत्याचार ढहाए गए। परन्तु वियतनाम अपनी स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करता रहा। अफगानिस्तान में अपने देश में तालिबानियों ने अनन्त जुल्म किए। लड़कियों के स्कूल तोड़ दिए गए। बुर्के में कैद महिलाओं को डण्डों-लाठियों से पीटा जाता। अफगानिस्तान में रूसियों को भगाने के लिए अमरीका ने लादेन को जन्म दिया। जब उसी लादेन ने अमरीका के विरूद्ध युद्ध छेड़ दिया। अमरीका के ट्रेड-टावर को जहाज द्वारा ध्वस्त कर दिया गया। सैकंडो अमरीका वासी मौत का शिकार बने तब अमरीका ने लादेन को अपना सबसे बड़ा दुश्मन माना। लादेन को जिन्दा अथवा मृत पकड़ने के लिए बड़ा ईनाम रखा गया। अन्त में लादेन को एबटाबाद (पाकिस्तान) में हेलिकाप्टर से हमला कर मार गिराया और उसके मृत शरीर को कहीं समुद्र में फैंक दिया गया ताकि उसकी कहीं कब्र अथवा मजार न बने परन्तु इन हत्याओं को कोई भी हत्या नहीं कहता।

अमरीका मानव अधिकारों के सरंक्षण का सबसे अधिक ढिंढोरा पीटता है मगर मानव अधिकारों का गला घोंटने में भी पीछे नहीं रहता। ईराक में झूठे आरोप लगाकर कितने ही निर्दोष लोगों की हत्या की गई। ईराक के पास जैविक और परमाणु हथियार रखने का आरोप लगाया गया जबकि यह आरोप निराधार साबित हुए। सद्दाम को कैद कर लेने के बाद उस पर यह मुकद्मा चलाया गया कि उसने 130 कुर्द और शिया मारे जो विद्रोह कर रहे थे। परन्तु स्वयं कितनी ही हत्याएं कर डालीं। फिर भी अमरीका के राष्ट्रपति ओबामा पर कोई मुकद्मा न चला। ऐसे ही अफगानिस्तान में लादेन की तलाशी के नाम पर हजारों अफगानियों की हत्याएं की गई जिसका अमरीका के पास कोई उत्तर नहीं है। मानव अधिकारों का ढिंढोरची स्वयं कितना बड़ा हत्यारा है। उसको कोई पूछने वाला नहीं है। द्वितीय विश्व युद्ध में जापान के दो शहरों हीरोशिमा और नागाशाकी पर परमाणु बम फैंक कर बड़ी संख्या में नर संहार किया गया। तीन लाख बीस हजार लोगों को मौत की नींद सुला दिया गया और दोनों शहरों को बर्बाद कर दिया गया। जल, मिट्टी और काफी समय तक प्रदूषण का शिकार रहीं। इसके अतिरिक्त रेडियो धर्मी विकिरण ने भी मानव जीवन व अन्य जीवधारियों को बहुत क्षति पहुंचाई। इससे अगली पीढ़ी अपंगता का शिकार बनी। अमरीका अब भी अपनी दादागिरि दिखाने से बाज नहीं आता और दुनिया की सुपर पावर बना बैठा है। ऐसे ही विश्व युद्ध में जर्मन के हिटलर ने विश्व भर में अपना राज्य स्थापित करने के लिए पांच करोड़ लोगों को मौत की नींद सुला दिया था। इनमें दो करोड़ केवल रूसी थे और बाकी तीन करोड़ शेष विश्व के लोग थे। इसी युद्ध में लाखों की संख्या में यहूदियों को कुत्ता गाड़ी में भर कर लाया जाता और गैस चैम्बरों में झोंक दिया जाता। एक बार एक डाक्टर की ड्यूटी लगी कि तुम्हें मरने वालों की गिनती करनी होगी। गैस चैम्बर में एक गर्भवती महिला को डाला गया। महिला का धमाके से पेट फटा तो बच्चा उछल कर बाहर जा गिरा। तब डाक्टर ने पैन और नोट बुक फैंक दी और गिनती करने से इंकार कर दिया। यहूदियों की खाल से लैम्प-शेड बनाए गए। और उनके खून को खाद के रूप में अंगूरों के पौधों की जड़ों में डाला गया। कहने का तात्पर्य यह है कि अनन्त जुल्म ढहाए गए। बेदर्दी से हत्याएं की गई परन्तु किसी पर भी हत्यारा होने का मुकद्मा न चला। प्रारम्भिक समय में जब छोटे-छोटे राजा एक-दूसरे पर हमले करते तो जो जितनी ज्यादा हत्याएं करता उतना ही वीर कहलाता। हारने वालों के घर-बार लूट लिए जाते। औरतों और बच्चों को बन्दी बनाकर हमेशा के लिए दास बना लिया जाता। यह सब कुछ योद्धा होने के नाम पर किया जाता। अब भी अगर हमारा कोई सैनिक पड़ौसी देश को शत्रु मानकर उस देश के सैनिकों अथवा स्थानीय

नागरिकों को मार गिराता है तो उसको मैडल देकर सम्मानित किया जाता है। अगर हमारा कोई सैनिक पड़ौसी देश के सैनिक द्वारा मार दिया जाता है तो मृत सैनिक को शहीद का नाम दिया जाता है। जबकि सच यह है कि दोनों अवस्थाओं में मानव का वध हुआ है जो निंदनीय है। वर्तमान काल में विश्व के देशों ने अपनी-अपनी सीमाओं की रक्षा के नाम पर अरबों-खरबों की बारूद व अस्त्र-शस्त्र के ढेर लगा रखे हैं। अमरीका के पास परमाणु बमों का बहुत बड़ा भण्डार हैं। जब कोई दूसरा देश परमाणु परीक्षण भी करता है तो अमरीका ही एतराज करता है। वह अपने भण्डारों को तो समाप्त करने को तैयार नहीं परन्तु देशों पर प्रतिबन्ध लगाने का प्रयत्न करता रहता है। इस समय सबसे बड़ा खतरा यह बना हुआ है कि ये परमाणु हथियार पाकिस्तान में स्थित आतंकवादियों के हाथ न लग जाए क्योंकि उस दशा में मानव जाति की बहुत बड़ी हानि हो सकती है। विश्वभर में मानव श्रम को सुरक्षा के नाम पर बारूद के ढेर में बदल दिया गया है। अगर इस बारूद को विनाश के लिए प्रयोग किया जाए तो यह सृष्टि को सत्रह बार समाप्त कर सकता है और उसके उपरान्त भी बारूद की मात्रा बची रहेगी। अगर हम इसी मेहनत को मानव भलाई में खर्च करे तो हर व्यक्ति को एक सम्मानजनक जीवन जीने का अवसर प्रदान किया जा सकता है। साहिर लुधियानवी जो एक माने हुए शायर हैं उनकी मशहूर ननम 'जंग' की कुछ पंक्तिया उदृत की जाती है।

जंग मशरक में हो या मगरब में,
नसल-ए-आदम का खून होता है आखिर।
टैंक आगे बढ़ें या पीछे हटें;
कोख धरती की बांझ होती है आखिर।
बम अपने खेतों पे गिरे या गैरों के खेतों पर,
जीसत (जीवन) भूख से तिलमिलाती है आखिर।

अन्त में साहिर लिखते हैः

ऐ दुनिया के शरीफ इन्सानों।
जंग टलती रहे तो बेहतर है।
हर घर में शमां जलती रहे तो बेहतर है।

दांत साफ, तो दिल दुरूस्त

अगर आप सोचते है कि ब्रश करने से केवल आपके दांत ही साफ होते हैं तो आपकी यह धारणा गलत हो सकती है। दरअसल, ब्रश करने से केवल आपके दांत ही साफ नहीं होते बल्कि दिल भी दुरूस्त रहता है। कोलंबिया यूनिवर्सिटी के मेलमेन स्कूल ऑफ पब्लिक हेल्थ की एक रिसर्च में यह बात सामने आयी है। रिसर्च करने वाले वैज्ञानिको ने पाया कि दांतो में जमने वाला प्लैक (मैल) हार्टअटैक, धमनियों के सिकुड़ने और मौत के लिए एक बड़ा कारक बन सकती है। वैज्ञानिकों ने पाया है कि मसूड़ो के रोग और बैक्टीरिया की रोकथाम करके हार्ट संबंधी बीमारियों को कम किया जा सकता है या फिर रोका जा सकता है। शोधकर्ताओं ने उत्तरी मैनहट्टन में लोगों के ओरल संक्रमण की जांच की और पांच हजार से अधिक मसूड़ों के सैंपल लिए। इसमें 11 जीवाणु हार्ट संबंधी बीमारियों के लिए जिम्मेदार पाए गए।

मूली एक फायदे अनेक

सलाद और सब्जी के रूप में इस्तेमाल की जाने वाली मूली को हम एक साधारण सब्जी मानते हैं, लेकिन मूली के कई फायदे हैं। मूली का नियमित सेवन करने वाले व्यक्ति के पास रोग नहीं आता है। मूली पेट संबंधित रोगों को दूर करती है और पाचन क्रिया को मजबूत बनाती है। यही नहीं, मूली स्मरणशक्ति को बढ़ाने में भी उपयोगी साबित हो सकती है। मूली का सेवन बालों को गिरने से रोकता है। इसमें मौजूट विटामिन बी और विटामिन सी नर्वस सिस्टम को भी मजबूत करता है। मूली खाने से मधुमेह में लाभ होता है। मूली को कच्चे दूध में मिलाकर चेहरे पर रगड़ने से दाग-धब्बे दूर हो जाते हैं। मूली आंखों के लिए भी काफी अच्छी होती है। इसके पत्ते को पीसकर अगर चेहरे, हाथों और पैरों पर मला जाए, तो इससे शरीर की खुश्की दूर होती है और त्वचा कोमल और मुलायम बनती है। कुल मिलाकर एक मूली कई बीमारियों का रामबाण इलाज है।

बाबागिरी का फर्जी धंधा

— मनोज कुमार, मो0ः 09431510239

बाबागिरी का धंधा प्रायः दुनिया के तथाकथित हर धर्म, हर संस्कृति और हर कोने में पाया जाता है। परन्तु अपने देश भारत में इसका जोर कुछ ज्यादा ही है। यहाँ बाबागिरी से हमारा अभिप्राय समाज के उन खास किस्म के लोगों से है जो आत्मा-परमात्मा, स्वर्ग-नरक, पाप-पुण्य, तीर्थ-व्रत, पुर्नजन्म, भाग्यवाद, चमत्कार, जाति-वर्ण, अन्धविश्वास, पाखण्ड चीजों को कारोबार करते है। इन चीजों के नाम पर अपना धंधा करते है और अपने को विशिष्ट होने का प्रदर्शन करते है। इन कारोबारी बाबाओं को लोग साधु संत, स्वामी, आचार्य, पुजारी, ग्रन्थी, मौलाना, योगी जैसे कई नामों से जानते पहचानते है। इस बाबागिरी के धंधे में भले ही ये लोग अलग-अलग नामों और पहचानों से जाने जाते हो परन्तु प्रायः सबका मकसद एक ही होता है, और वो है - लोगों को बेवकूफ बनाकर उनका शोषण करना और समाज को पीछे धकेलना।

पहले बाबागिरी का धंधा गाँवों और छोटे शहरों कस्बों में ही ज्यादा था। परन्तु शहरीकरण, आधुनिकता और टी.वी. चैनलों की बाढ़ ने अब बाबागिरी को ज्यादा पॉपुलर बना दिया है। रोज किसी न किसी चैनल पर दिनभर कोई न कोई बाबा प्रवचन करते, अंगूठी, ताबीज, यंत्र बेचते, लोगों का भूत वर्तमान भविष्य बताते एवं कृपा बरसाते मिल जाते है। महिला बाबा भी इस दौड़ में पीछे नहीं है। बाबाओं की वेषभूषा भी बड़ी अलग-अलग होती है, उनमें से कोई मूँछ दाढ़ी बढ़ाए होते है तो कोई एकदम क्लीन शेव कट वाले बाबा भी मिल जाते है। उनके माथे का चन्दन टीका की वेराइटी तो देखते ही बनती है।

सबका गहना, जेवर, कुंडल, पोषाक का निराला अंदाज होता है। सबका बोलने का स्टाइल भी देखने लायक होता है। उनके आसन और आसपास की सजावट ऐसी की राजा-महाराजाओं का जमाना याद आ जाये। पूरा ठाट-बाट ऐशो आराम वाला होता है। जंगल, पहाड़ों और गुफाओं से निकलकर अब तो बाबा हाईटेक उनका आश्रम हाईटेक और उनका पूरा कारोबार हाईटेक हो गया है। इनका कारोबार अब नेश्नल से मल्टीनेशनल हो गया है। कई मालदार देशों में इसका साम्राज्य फैला हुआ है।

आजकल एक क्लर्क की नौकरी के लिए भी विद्यार्थी को बहुत पढ़ना पड़ता है, बहुत मेहनत करना पड़ता है। सभी जानते है प्रतियोगिता परीक्षा पास करनी पड़ती है परन्तु बाबागिरी के लिए ऐसी कुछ भी टेंशन की आवश्यकता नहीं है। इसके लिए धूर्त, चालाक, जाल फरेबी, कुछ श्लोकों का रट्टु, बोलने और बातचीत में चतुर, ठग जैसा गुण ही काफी है बाकि ये गोरख धंधा खुद ही सीखा देता है। सारे के सारे बाबा टाईप के लोग आज जनता का भूत वर्त्तमान बताने और भविष्य ठीक करने का दावा करते है। सभी अपने ज्ञान को सच्चा और औरो का झूठा बताते है। कोई बाबा वर्त्तमान ज्ञान विज्ञान, दर्शन, अविष्कार और खोजों की प्रशंसा नहीं करता। अपने सैकड़ों हजारों साल पुरानी ज्ञान को अध्यात्म के नाम पर झूठी प्रशंसा करता है।

सच बात तो यह है कि बाबागिरी का धंधा करने वाले जाली और धूर्त लोग होते है। ईश्वर स्वर्ग नरक, मोझ मुक्ति जैसी चीजों का सब्जबाग दिखाकर जनता का घोर शोषण करते है। देश और समाज का दृष्टिकोण वैज्ञानिक बनने में अपार बाधा और भ्रम पैदा करते है। आज तक किसी बाबा ने मानव समाज को सुखी बनाने के लिए टी.वी., फ्रिज, मोबाइल, साइकिल, कार, मशीन, सुई, कैंची, कलम, कागज तक इजाद नहीं किया परन्तु ये बाबा हमेशा मानव कल्याण और

सुखी बनाने का दावा करते रहे। ये लोग कभी खेत खलिहान कारखानों में उत्पादन निर्माण नहीं करते परन्तु उपभोग सभी चीजों का करते है। आज तक किसी बाबा ने एक मुट्ठी अनाज पैदा करके समाज को नहीं दिया परन्तु भोजन हमेशा अच्छा करते है। ये लोग दूसरों की कमाई पर मौज मस्ती करते हैं। ये लाखों परजीवी बाबा लोग अगर एक दिन में मर जाये तो समाज का कुछ भी नहीं बिगड़ेगा। हाँ मुफ्त की दूसरों की कमाई खाने वालों की संख्या कुछ कम अवश्य हो जाएगी। जाति, धर्म, नस्ल, रंग के नाम पर समाज को बाँटने वालों की संख्या कम हो जाएगी। समाज में नफरत फैलाकर दंगा-फसाद, नरसंहार कराने वाले इन्सानियत के दुश्मनों की कुछ संख्या अवश्य कम हो जाएगी।

कुछ लोग कहते है कि सारे बाबा एक जैसे नहीं होते है। कुछ खराब हो सकते है परन्तु ज्यादातर ठीक है। इन्हें बेवजह बदनाम किया जाता है। मगर सच तो यह है कि इस बाबागिरी के धंधे में सारे गन्दे है। सभी का कारोबार आत्मा-परमात्मा, स्वर्ग-नरक, जादू-टोना चमत्कार, झूठा आस्था विश्वास और मोझ मुक्ति अंधविश्वास पाखण्ड जैसे आइटमों के बदौलत ही तो चलता है। पूरी दुनिया में आज तक किसी ने भी आत्मा, परमात्मा, स्वर्ग, नरक चमत्कार को सिद्ध नहीं कर पाया है। ये सब झूठ काल्पनिक और अवैज्ञानिक है। ये तो बाबा लोगों की हिमाकत है कि झूठे चीजों का कारोबार पूरा सच बताकर विश्वास से लबरेज होकर करते है। सोचने की बात है जब कारोबार का आइटम ही झूठा है तो धंधा सच्चा कैसे हो सकता है और इस धंधे को करने वाले सच्चे कैसे हो सकते है।

अनमोल वचनः

1. ''जितना ही हम अध्ययन करते हैं, उतना ही हमें अपने अज्ञान का आभास होता जाता हैं।''

शैली

मानसिक रोगों के लक्षण

* उदासी, चिड़चिड़पन, ज्यादा गुस्सा आना, किसी काम में मन न लगना, किसी से बात करने को मन न करना, नींद न आना, भूख कम लगना, आत्मविश्वास में कमी होना, आत्महत्या के विचार आना।
* घबराहट होना, दिल जोर-जोर से धड़कना, बेचैनी होना, हाथ पैर फूलना, शरीर/दिमाग में कमजोरी महसूस करना।
* बार-बार एक ही ख्याल मन में आना, एक ही काम बार-बार करना (जैसे बार-बार हाथ धोना, बार-बार ताला चैक करना)
* मिर्गी का दौरा पड़ना, हिस्टीरिया का अटैक आना।
* बहुत ज्यादा बोलना, ज्यादा खुश रहना, खुद को बहुत अमीर/ताकतवर समझना, ज्यादा पूजा-पाठ करना, ज्यादा खर्च करना, मार-पिटाई करना।
* अपने आप से बाते करना, दोस्तो व घरवालों पर शक करना, डर लगना, अजीब हरकते करना (जैसे कूड़े में हाथ मारना, सामान तोड़ना, आग लगाना) अपनी साफ-सफाई का ध्यान न रखना, बिना बात के हंसना।
* लम्बे समय से सिर दर्द रहना।
* किसी विशेष परिस्थिति में डर लगना (जैसे भीड़, ऊँचाई, बंद जगह, Social Phobia)
* याददाश्त में कमजोरी होना।
* किसी भी तरह के नशे की आदत होना (जैसे शराब, अफीम, पोस्त, स्मैक, टीके, कैप्सूल, गोलियां, भांग, सिगरेट, बीड़ी आदि)
* सैक्स रोग जैसे- घात रोग, शीघ्र पतन, सैक्स कमजोरी, सम्भोग करने में अनिच्छा।
* बच्चे की मानसिक बिमारियां जैसे- बिस्तर में पेशाब करना, अत्यधिक जिद्द/गुस्सा करना, मारपीट करना, पढ़ाई में ध्यान न लगना।

मानसिक रोग भी अन्य बिमारियों की तरह नियमित ईलाज के साथ ठीक हो सकते हैं। अगर आप में, आपके अपनों या आस-पास में इस रोग के लक्षण लगें तो जल्द सम्पर्क करें।

डा0 राजीव माही
मानसिक रोग विशेषज्ञ, अम्बाला
मो0 9355085291

स्वास्थ्यः

औप्टिज़्मः

बीनू भटनागर

[1] औटिज़्म एक ऐसा विकार है जो बच्चों में सीखने में दिक्कते (learning disabilities) पैदा करता है और कभी-कभी उन्हे मन्दबुद्धि मान लिया जाता है। औटिज़्म एक स्नायु से संबंधित विकार है जो व्यापक रूप से बढ़ते हुए बच्चों की सीखने की प्रक्रिया में बाधक होता है।

यह लेख लिखने का उद्देश्य केवल इस विकार की सतही जानकारी से अवगत कराना है, न कि उसके वैज्ञानिक पक्ष के विस्तार मे जाना। इस विकार पर काफी शोध हुए हैं पर अभी भी और अनुसंधान और शोध करने की जरूरत है, कारण और उपचार ढूंढने के लियें।

इससे पीड़ित बच्चे सामाजिक व्यवहार सही तरह से नहीं कर पाते, उन्हे शाब्दिक और गैर शाब्दिक संचार (verbal, nonverbal communication) में भी बहुत असुविधा होती है। उनके व्यवहार में पुनरावृत्ति और रूढ़िवादिता आ जाती है। वे बदलाव पसंद नहीं करते। उनका मस्तिष्क सुचनाओं का सही प्रसंसकरण (processing) नहीं कर पाता। औटिज़्म के लक्षण तीन साल की आयु के बाद ही प्रकट होते हैं इसलिए इसका निदान भी इससे पहले नहीं हो पाता। औटिज्म के निदान के लिए कोई परीक्षण नहीं है मनौवैज्ञानिक और मनोचिकित्सक बच्चे के व्यवहार का निरीक्षण करके ही निदान करते हैं।

औटिज़्म में मस्तिष्क की कोशिकाओं और उनको जोड़ने वाले सिनैप्सिज़ में बदलाव आ जाता है, इससे संबंधित बहुत सारे सवाल हैं जिनका जवाब ढूंढने के लिए अभी और अनुसंधानों की आवश्यकता है। औटिज़्म के कारण अनुवांशिक होते है पर अभी जानकारी पूरी नहीं हैं, माना जाता है कि जींस में कुछ अनचाहे परिवर्तन कभी हो जाते हैं जिससे यह होता है। कभी-कभी देखा गया है कि औटिज़्म के लक्षण अनुवांशिक नहीं होते और जन्म के समय की किसी गलती जैसे भारी घातु, कीटनाशकों या किसी ग़लत वैक्सीन के उपयोग से भी हो सकते है, परन्तु निश्चित रूप से कारणों के बारे में अभी कुछ कहा नहीं जा सकता।

इस विकार में सामान्य सामाजिक विकास अवरूद्ध होने लगता है पर सामाजिक विकास से संबंधित कुछ अन्य विकार भी होते है, इसलिए कुशल विशेषज्ञ द्वारा सही निदान होना जरूरी है। औटिज़्म से पीड़ित बच्चे बाहरी उत्तेजना (stimuli) पर सामान्य बच्चों की तरह प्रतिक्रिया (react) नहीं कर पाते। आंख से आंख मिलाना मुश्किल होता है। शरीर के हाव भावो से भी मन की बात बताना मुश्किल होता है। किसी चीज़ की तरफ इशारा करके उसे मांग भी नहीं पाते, अपनी उम्र के हिसाब से व्यवहार नहीं कर पाते। अचानक बीच में एक दो शब्द बोल देंगे। कभी किसी व्यक्ति की नक्ल करने की कोशिश भी करते हैं। ये बच्चे अकेलापन महसूस करते हैं, दोस्त नहीं बना पाते, अगर कोई दोस्त बन जाए तो उससे बहुत जुड़ जाते हैं। कभी-कभी चिडचिड़ापन अक्रामक व्यवहार या हिंसा भी कर सकते हैं।

अकसर ये बच्चे एक काम को दोहराते हैं जैसे हाथ पटकना या पैर पटकना, बार-बार चीज़ों को लाईन में लगाना या एक के ऊपर एक जमाना। इन्हे बदलाव नहीं पसंद होता जो चीज जहां हो वहीं रहनी चाहिए। खाने में कोई चीज़ पसन्द आ गई तो रोज़ वहीं खाना चाहेंगे। इसी तरह टी.वी. के किसी कार्यक्रम से जुड़ गये तो उसे देखे बिना नहीं चैन मिलेगा। कपड़े भी एक ही तरह के पहनना चाहेंगे। दिनचर्या में कोई बदलाव स्वीकार नहीं करेंगे। कभी

अपनी त्वचा को खुरचते रहेंगे जिससे खुद को नुकसान भी हो सकता है।

औटिज़्म के लक्षण बच्चों में धीरे-धीरे दिखाई देते है। कभी-कभी शुरू में वे समान्य बच्चों की तरह बढ़ते हैं फिर उनकी हालत में गिरावट आने लगती है। इस समय उन्हे बार-बार दोहरा कर बोलने में, समझने में बातचीत करने में मदद की जा सकती है जिससे वो अपनी देखभाल कर सकें और उनमें आत्मविश्वास पैदा हो। ऐसा करने से उनका संचार कौशल [communication skills] और सामाजिक कौशल [social skills] बढ़ने की आशा की जा सकती है। कुछ लोगों का मानना है कि औटिज़्म एक बीमारी नहीं है एक अलग स्थिति है जिसे स्वीकार करना चाहिए, जबकि कुछ लोग इसे एक बीमारी मान कर इसके ईलाज की तलाश में लगे हैं। जब तक इसका कोई ईलाज नहीं मिलता तब तक तो इसे स्वीकार करके, बच्चों को उचित प्रशिक्षण देकर, उन्हे यथासंभव योग्य और आत्मनिर्भर बनाने पर ध्यान देना ज़रूरी है। औटिज़्म से पीड़ित बच्चों का संचार कौशल कम होता है पर कुछ बड़ा होने पर काफी बच्चे अपनी जरूरते बता पाते हैं। अक्सर उनके हाव-भाव शब्दों से मेल नहीं खाते। अपनी भावनायें और अनुभव दूसरों से सांझा नहीं कर पाते, सुनकर बात को दोहराते हैं।

औटिज़्म स्पैक्ट्रम के अंतर्गत कई प्रकार के विकार आते हैं। औटिज़्म स्पैक्ट्रम [Autism spectrum] में ऐसपर्गर्स सिंड्रोम (Asperger syndrome ASDs) और परवेसिव डेवलपमैन्ट डिसऔर्डर (Pervasive developmental disorder PDD, not otherwise specified NOS,) होता है जिनमे औटिज्म का स्तर अगल-अलग होता है, कम प्रभावित बच्चे अपना काम अपने आप करना सीख जाते हैं अधिक प्रभावित बच्चों को किसी के सहारे की आवश्यकता पडती है। कुछ विशेषज्ञ इन बच्चों को विविध प्रकार से शिक्षा और प्रशिक्षण देकर उनकी क्षमताओं का विकास करते हैं। हरेक बच्चे की आवश्यकता के अनुसार उसके प्रशिक्षण का कार्यक्रम तैयार करना पड़ता है। माता-पिता को उनका आत्मविश्वास बढ़ाना पड़ता है।

यद्यपि औटिज़्म का कोई इलाज नहीं है फिर भी कुशल प्रबन्धन से बच्चों की कार्य कुशलता बढ़ाई जा सकती है। औटिज़्म से पीड़ित बच्चे कभी किसी चीज़ जैसे संगीत, नृत्य, चित्रकला या किसी अन्य क्षेत्र में विशेष योग्यता रखते हैं जिसको विकसित किया जा सकता है।

यदि किसी बच्चे में औटिज़्म के लक्षण दिखाई दें तो अपने क्षेत्र के किसी मनोवैज्ञानिक या मनोचिकित्सक से मिलना चाहिए। वो बच्चे के व्यवहार के आधार पर अन्य विशेषज्ञों की सहायता लेकर सुनिश्चित करेंगे के बच्चे को औटिज़्म है या नहीं और है तो किस स्तर का। बच्चे की जरूरत के अनुरूप प्रशिक्षण के लिए भी आपके क्षेत्र में कहां सुविधा है, वो बता पायेंगे। कुछ समय बाद प्रशिक्षण के तरीके अभिभावक भी सीख जाते हैं।

साभार-www.pravakta.com

सुक्तियां

1. ''यदि ईश्वर सर्वशक्तिमान है तो वह सब कुछ कर सकता है। वह एक पत्थर को इतना भारी बना सकता है, जो स्वयं उससे उठ न सके। इसका तात्पर्य यह है कि कोई ऐसी चीज है जो ईश्वर नहीं कर सकता; वह पत्थर नहीं उठा सकता। इसलिए सर्वशक्तिमान परमात्मा का कोई अस्तित्व नहीं है।''

टाईट्स लुक्रीटियस कारूस (94-49 ई.पू.)
(रोमन दार्शनिक)

2. ''अज्ञानियों के लिए सभी धर्म एक जैसी महानता रखते हैं, राजनीतिज्ञों के लिए लाभप्रद होते हैं तथा दार्शनिकों के लिए हास्यास्पद।''

टाईट्स लुक्रीटियस कारूस (94-49 ई.पू.)
(रोमन दार्शनिक)

ईसाई धर्म और हिंसा

गीतेश शर्मा

''अगर तुम गोसपेल (ईसाई धर्मग्रन्थ) को सही मायने में समझते हो, तो इस बात की कल्पना मत करो कि इसका प्रसार उत्पीड़न, दुःख अथवा घोर गर्जना के बिना संभव है। ईश्वर का शब्द एक तलवार है, एक युद्ध है, एक विनाश है।'' **मार्टिन लूथर**
(सन 1520 में आपातकालीन.... से उद्धृत)

प्राचीन काल से या यूँ कहे तो गलत नहीं होगा कि जब से विभिन्न धर्मो की अवधारणाओं का विकास हुआ, तब से अधिकांश लड़ाइयोंके पीछे धार्मिक आचार-विचार, मत-विश्वास प्रत्यक्ष किंवा परोक्ष रूप से बहुत बड़े कारण रहे हैं। यहां तक कि सभ्यताओं के विकसित स्वरूप के दौर में हुई लड़ाइयों, संघर्षो के पीछे भी ये कारण किसी न किसी रूप से विद्यमान रहे हैं। चाहे वह वैदिक युग में असुरों के साथ लड़े गए युद्ध हों, चाहे मध्य मेक्सिको के अजतेकों के साथ की गई लड़ाइयाँ हों, चाहे स्केन्डिनेविया के योद्धा विकिंग के साथ हुए खूनी संघर्ष हों, चाहे ईसाईयों-मुसलमानों के बीच हुए रक्तरंजित धर्मयुद्ध या जेहाद हों, चाहे ईसाईयों के बीच आपस में हुए रक्तपात हों, चाहे मुसलमानों के बीच आपस में हुए युद्ध हों, या आधुनिक एवं उत्तर आधुनिक काल में तीसरी दुनिया के देशों में धर्म की पहचान के लिए पुनरूत्थान के नाम पर हो रही खूँरेजी हो-इन सब के पीछे कट्टर धार्मिक दुराग्रह और मत-विश्वासों ने खलनायक की ही भूमिका निभाई है।

यहूदी, ईसाई और इस्लाम के उदय से पहले बेबीलोन, सुमेर, असीरिया, अरब, मिस्त्र, ईरान आदि अंचलों में बहुदेववाद और मूर्ति-पूजा का प्रचलन था। इन तीनों धर्मो के अनुयायियों द्वारा पहले से चले आ रहे धर्मो पर निरन्तर प्रहार का फल यह हुआ कि आज वहाँ उन धर्मो का कोई अवशेष तक नहीं मिलता।

कोई धर्म चाहे जितना सहिष्णु, दयालु, कृपालु होने का दावा करे, इतिहास इस बात का साक्षी है कि ये दावे थोथे साबित हुए हैं। वास्तविकता तो यह है कि वास्तविकता तो यह है कि जब भी किसी धर्म का उदय हुआ है, उसने पहले से वर्तमान वर्तमान धर्मो को अपदस्थ या नेस्तनाबूद करने का भरसक प्रयत्न किया है। कालान्तर में उसने भी अपनी सत्ता, प्रभाव एवं एकाधिकार को बनाए रखने के लिए दमन का सहारा लिया। उसकी प्रभुसत्ता को चुनौती देनेवालों के विरूद्ध घोर अत्याचार किए।

मध्ययुग में निरंकुश चर्च द्वारा विधर्मियों के विरूद्ध चलाए गए दमन अभियानों के दौरान हजारों वाल्डेन्सों, लोलार्डो, हुस्साइयों में कइयों को जेलों में डाल दिया गया, कइयों को बहिष्कृत कर दिया गया और कइयों को जिन्दा जला दिया गया। इन सबका अपराध यह था कि इन्होंने अपने आध्यात्मिक उद्‌देश्यों की प्राप्ति के लिए नए अलग रास्तों का निर्माण किया। पुरोहित एवं शासक वर्ग ने असहाय गरीब जनता की अज्ञानता का लाभ उठाकर अपने एवं शासक वर्ग के हितों की रक्षा के लिए जो तानाशाह रूख अख्तियार कर लिया था उसके विरूध उन्होंने आवाज उठाई। वैचारिक स्तर पर विवेक एवं ज्ञान के विकास के लिए यह मनोवैज्ञानिक दबाव पुरोहित एवं शासक वर्ग के समक्ष एक खतरनाक चुनौती के रूप में उपस्थित था। पुरोहित-पादरियों ने इन सुधारकों एवं क्रांतिकारियों को विधर्मी घोषित किया और विधर्मिता को सबसे बड़ा राजदंड। हालाँकि विधर्मियों का संघर्ष किसी संगठित सैन्य बलबूते पर नहीं था, लेकिन पुरोहित वर्ग ने विधर्मियों को जड़मूल से उखाड़ने के लिए राज्य एवं धर्म कानूनों का सहारा लिया। उनमें आवश्यकतानुसार संशोधन किए। विधर्मिता एक अक्षम्य अपराध था। जबकि आचरण, चाल-चलन एवं चरित्र की दृष्टि से अधिकांश विधर्मी किसी

साधु-सन्त से कम नहीं थे।

हेनरी चार्ल्स ली की पुस्तक-'ए हिस्ट्री ऑफ इन्क्विजिशन ऑफ द मिडिल एजेज' (A history of the inquisition of the middle ages) में उल्लिखित एक इन्क्विजिटर घोषणापत्र में इस बात का स्पष्ट उल्लेख है- 'अपनी वाणी और व्यवहार में विधर्मी अत्यन्त विनम्र और संयमित हैं। उन्हें अपने वस्त्रों पर जरा भी गर्व नहीं है। उनके वस्त्र न बहुत महँगे हैं और न बहुत बेकार। वे धोखेबाजी, जालसाजी एवं झूठ से बचने के लिए किसी प्रकार का व्यापार नहीं करते हैं। वे अपने श्रम से अपनी जीविका चलाते हैं। उनके शिक्षक मोची हैं। वे धन को जमा नहीं करते। जो कुछ उनके पास है, उसमें वे सन्तुष्ट हैं। खाने-पीने के मामले में वे पवित्रता और सादगी बरतते हैं।'

अपने आचार-व्यवहार में इतने नेक, संयमित एवं सादगीपूर्ण होने के बावजूद विधर्मियों की घोर निन्दा की जाती थी और उन्हें निर्मम, क्रूर यातनाएँ एवं दंड दिए जाते थे। इस पक्ष की सबसे बड़ी विडम्बना यह रही कि विधर्मियों पर यह सब कहर इन्क्विजिशन के नाम पर उन लोगों ने बरपाए जो सबसे दयालु, बुद्धिमान, न्यायप्रिय और सन्त प्रकृति के व्यक्ति माने जाते थे और जिनके धर्म की बुनियाद प्रेम और पवित्रता पर रखी गई थी।

जेरूसलम और इसके आसपास के अंचल विश्व के तीन प्रमुख धर्मों-यहूदी, ईसाई और इस्लाम का केन्द्र स्थल रहे हैं। इनमें प्राचीनतम धर्म यहूदियों का है। यहूदी धर्म के प्रादुर्भाव से पहले यह अंचल विभिन्न कबीलों में बँटा हुआ था और हर कबीले के अपने देवी-देवता होते थे। एक ईश्वर या एक धर्म की अवधारणा से लोग सर्वथा अपरिचित थे। पहली आचार-संहिता बेबीलोन के हम्मूराबी ने लिखी जिसे अधिकांश कबीलों ने अपनाया।

एकेश्वरवाद और ईश्वर के दूत के रूप में पैगम्बर की अवधारणा का प्रारम्भ यहूदी धर्म से होता है। यहूदियों के धार्मिक ग्रन्थों के संकलन को ओल्ड टेस्टामेंट के रूप में जाना जाता है। इसके एक ग्रन्थ जेनेसिस (Genesis, 1-12) के अनुसार पैगम्बर अब्राहम को ई. पू. 2000 पहले ईश्वर याहोवा (Yahowa) का संदेश मिला कि कनान क्षेत्र उसके अनुयायियों यानी यहूदियों का प्रतिश्रुत स्थल (Promised Land) है जहाँ उनका अपना राज्य होगा। प्रतिश्रुत स्थल पर अधिकार कर अपना राज्य स्थापित करने में यहूदियों को सदियों अनवरत संघर्ष के दौर से गुजरना पड़ा।

इस प्रकार इस अंचल में धर्म के नाम पर संगठित रूप से हिंसात्मक संघर्षों का प्रारम्भ ई. पू. 2000 से होता है और आज भी यह अंचल खूनी संघर्षों का केन्द्र बना हुआ है।

यहूदियों का प्रतिश्रुत स्थल कनान का क्षेत्र ही इजराइल है।

ऐसा नहीं कि यहूदियों के आगमन से पहले यह अंचल रक्तपात-हिंसा से रहित था। विभिन्न देवी-देवताओं को मानने वाले कबीलों में आपस में हिंसात्मक टकराव पहले भी होते थे। यहूदी धर्म के प्रादुर्भाव से से इन संघर्षों ने और उग्र रूप धारण किया।

प्रारम्भ में इस क्षेत्र में पहले से विद्यमान विभिन्न कबीलों और यहूदियों के बीच संघर्ष होते थे। तत्पश्चात यहूदियों और ईसाईयों, यहूदियों और मुसलमानों, ईसाईयों और मुसलमानों के बीच निरन्तर संघर्ष होते रहे। अठारहवीं सदी आते-आते ईसाईयों और यहूदियों में तो शान्ति स्थापित हो गई, पर यहूदियों और मुसलमानों तथा ईसाईयों और मुसलमानों के बीच संघर्षों का सिलसिला जारी रहा।

मजे की बात यह है कि ईसाई और इस्लाम धर्म दोनों का जन्म यहूदी धर्म से हुआ। यहूदियों के धर्मग्रन्थ जेनेसिस को ईसाई और इस्लाम दोनों धर्मों में मान्यता प्राप्त है और यहूदियों के पैगम्बर अब्राहम, मूसा (Moses) आदि को ईसाई और इस्लाम धर्मों में भी पैगम्बर माना गया है। यहाँ तक कि यहूदियों की धार्मिक आचार-संहिता के काफी बड़े अंश को ईसाई और इस्लाम धर्मों में स्थान मिला। पर इन सब तथ्यों के बावजूद इन धर्मों के अनुयायियों के बीच सद्भाव, सहिष्णुता और सहअस्तित्व का सर्वथा अभाव रहा।

मध्य-पूर्व में इजराइल के अस्तित्व को मुसलमान आज भी स्वीकार करने को तैयार नहीं।

यहूदी और मुसलमानों के बीच कटुता बनी हुई है बावजूद इसके कि सन् 1993 के उत्तरार्द्ध में इजराइल, अरब देशों और फिलिस्तीनी मुक्ति मोर्चे के बीच शांति प्रयासों में उल्लेखनीय प्रगति हुई है और ठोस नतीजे भी सामने आए हैं।

सूडान और मिस्त्र में कट्टर मुसलमानों द्वारा ईसाईयों का उत्पीड़न किया जा रहा है और उन्हें वहाँ से निकाल बाहर करने की चेष्टा जारी है।

यूगोस्लाविया के बोसनिया, क्रोसिया और सर्बिया के क्षेत्र में प्रोटेस्टेंटों और कैथोलिकों के बीच तथा प्रोटेस्टेंटों, कैथोलिकों एवं मुसलमानों के बीच रक्त-जनित हिंसा में लाखों लोग मारे जा चुके हैं और मारे जा रहे हैं।

आइए, प्राचीन इतिहास पर दृष्टिपात करें। जैसाकि ऊपर लिखा जा चुका है, 4000 वर्ष पूर्व याहोवा ने अब्राहम को यहूदियों के प्रतिश्रुत स्थल पर संदेश दिया था पर कनान क्षेत्र के कबीलों के लोगों ने यहूदियों को वहाँ से निष्कासित कर दिया फलस्वरूप उन्हें मिस्त्र में शरण लेनी पड़ी। मिस्त्र में इन्हें सदियों तक, तब तक दास बनाकर रखा गया जब तक कि ई. पू. 1300 में दूसरे पैगम्बर ने इन्हें मुक्ति न दिलाई। ई. पू. 1274 में जोशुवा के नेतृत्व में कनान पर मुख्य आक्रमण किया गया। ग्यारहवीं-बारहवीं सदी पूर्व में जूड्स (Judes) के काल में कनान पर यहूदियों को पहली बार प्रभुता प्राप्त हुई और ई. पू. 1000 में डेविड के नेतृत्व में पूरे फिलिस्तीन पर पूरी तरह काबिज हो पाए। पर अधिक दिनों तक इनका प्रभुत्व नहीं रहा। पहले विभिन्न कबीलों, फिर रोमन साम्राज्य और बाद में ईसाईयों और मुसलमानों से इनके हिंसक टकराव होते रहे और अपना क्षेत्र छोड़कर ये दुनिया भर में बसते-भटकते रहे। बाहर भी इन्हें सुख-शांति से रहने नहीं दिया गया।

जेरूसलम पर अधिकार को लेकर मुसलमानों के विरूद्ध हुए धर्मयुद्धों (Crusades) के दौरान यूरोप में रह रहे यहूदियों पर ईसाई धर्मयोद्धाओं द्वारा अमानुषिक अत्याचार किए गए, इनका कत्लेआम किया गया।

द्वितीय विश्वयुद्ध में हिटलर की शह पर नाजियों ने कम-से-कम अस्सी लाख यहूदियों का कत्लेआम किया। अन्ततः तत्कालीन ब्रिटिश साम्राज्य के सहयोग से फिलिस्तीन क्षेत्र में इजराइल राज्य की स्थापना हुई और लगभग 2000 वर्षों बाद यहूदी पुनः प्रतिश्रुत स्थल पर अपना राज्य स्थापित कर पाए।

करूणा, प्रेम और दया को आधार बनाकर ईश्वर-पुत्र ईसा मसीह ने ईसाई धर्म की नींव डाली। रोमन साम्राज्य की चक्की में पिस रहे यहूदियों के एक वर्ग को ऐसा लगा कि ईसा मसीह के रूप में उनका पैगम्बर आया है जो उन्हें उनकी भूमि जेरूसलम को रोमन साम्राज्य से मुक्त कराएगा। यहूदियों के ही एक दूसरे वर्ग को ईसा मसीह का बढ़ता प्रभाव नागवार गुजरा और उन्हें ईसा मसीह से अपने धर्म पर खतरा महसूस हुआ। रोमन सम्राट द्वारा नियुक्त जेरूसलम के प्रशासक पोंतिअस पिलेत (Pontias Pilate) के कान यहूदियों द्वारा ईसा मसीह के विरूद्ध भरे जाने पर उसके आदेश से उन्हें सूली पर चढ़ा दिया गया और सूली पर चढ़ाने वाला यहूदी था। इतना ही नहीं ईसा मसीह के जीवन काल में बने बारह शिष्यों में से कई की यहूदियों द्वारा हत्या की गई। यहीं से यहूदियों और ईसाईयों के बीच वैमनस्य का बीज पड़ा।

ईसा मसीह ने कहा था, ''शैतान का प्रतिरोध मत करो। कोई तुम्हारे दाहिने गाल पर थप्पड़ मारे तो बायाँ गाल उसके सामने कर दो। अहिंसा के प्रवर्त्तक ईसा मसीह के अनुयायी अधिक दिनों तक उनके इस सिद्धान्त का पालन नहीं कर पाए। ईसाई धर्म के प्रचार और प्रसार के लिए तथा ईसाई समाज के निहित स्वार्थी वर्ग-पुरोहितों एवं शासकों की स्वार्थ पूर्ति के लिए दुनिया भर से ईसाईयों द्वारा मानव जाति के विरूद्ध अमानुषिक अत्याचार किए गए। एक हाथ में बाइबिल और दूसरे में तलवार लेकर वे ईसा मसीह के प्रेम, करूणा और अहिंसा के सिद्धान्तों का मखौल उड़ाते रहे।

ईसाई धर्म के प्रारम्भिक काल में ईसा धर्म के अनुयायियों को रोमन साम्राज्य और यहूदियों का कोपभाजन बनना पड़ा और दोनों ने ईसाईयों पर बेशुमार जुल्म ढाए।

ईसाई धर्म के प्रारम्भिक तीन सौ वर्षों तक ईसाईयों पर रोमन सम्राटों द्वारा कहर ढाया जाता रहा। यह सिलसिला रोमन सम्राट कॉन्स्तेन्ताइन (सन् 313) तक चला। रोमन सम्राट कॉन्स्तेन्ताइन द्वारा ईसाई धर्म स्वीकार किए जाने के पश्चात स्थिति में आमूल परिवर्तन आया। जब सत्ता से ईसाई धर्म का रिश्ता कायम हुआ तो जिन अमानुषिक अत्याचारों का शिकार इससे पहले तक ईसाई होते रहे थे, अब ईसाईयों द्वारा गैर ईसाईयों पर उनसे कहीं बढ़-चढ़कर अत्याचार किए जाने लगे। जो लोग सर्वधर्म समभाव और धार्मिक सहिष्णुता की बात करते हैं, उन्हें जेरूसलम से सीख लेनी चाहिए। जेरूसलम तीन धर्मों का केन्द्रीय स्थल रहा है। इन धर्मों के उद्भव के पहले भी वहाँ बहुदेववादी कबीले निवास करते थे। पर प्राचीन काल से आधुनिक काल तक यह क्षेत्र विभिन्न धार्मिक समुदायों के बीच हिंसात्मक संघर्षो का स्थल रहा है। धार्मिक आततायियों द्वारा न जाने कितनी बार इसे उजाड़ा गया, यहाँ स्थित धार्मिक स्थलों को अपवित्र और नष्ट-भ्रष्ट किया गया। जेरूसलम की मुक्ति के लिए लाखों उन्मादियों ने प्राणों की आहूति दी। जेरूसलम का कण-कण हिंसा-जनित मानव-रक्त में डूबा हुआ है।

यहूदियों के ईश्वर याहोवा द्वारा प्रतिश्रुत क्षेत्र (Promised Land) का एक हिस्सा है जेरूसलम। याहोवा की अकाशवाणी के हजार साल बाद यहूदी राजा डेविड ई. पू. 1000 में जेरूसलम पर कब्जा कर पाए थे। डेविड के पुत्र सोलोमन ने यहाँ यहूदियों के पहले मंदिर की स्थापना की थी पर अवसर पाते ही यहूदी विरोधियों ने यहूदियों को जेरूसलम से खदेड़, उस पर कब्जा कर लिया और सोलोमन द्वारा बनवाए गए मन्दिर को तोड़ा। ई. पू. 520 में इसका पुनर्निर्माण किया गया।

तीनों धर्मों-यहूदी, ईसाई और इस्लाम-की संगमस्थली जेरूसलम को तीनों ही धर्मों के अनुयायी पवित्र भूमि (Holy Land) मानते हैं। यहूदियों ने ई. पू. 1000 में जेरूसलम पर कब्जा किया और यहूदी राजा डेविड के पुत्र सोलोमन ने इसे यहूदी राज्य की पहली राजधानी का दर्जा दिया। ईसा मसीह यहीं पैदा हुए और यहीं उन्हें सूली पर चढ़ाया गया। यहीं पर इस्लाम के अंतिम पैगम्बर मोहम्मद ने दो पंखों वाले घोड़े पर सवार हो स्वर्गारोहण किया। इस घटना की स्मृति में खलीफा उमर ने यहाँ मस्जिद बनवाई।

जेरूसलम को सर्वधर्म समभाव, सहिष्णुता, सहअस्तित्व का एक प्रेरक स्थल होना चाहिए था। यहाँ से तीनों धर्मों के ईश्वरों की दया, करूणा, प्रेम, शान्ति, का संदेश मानवता के लिए उद्घोषित होना चाहिए था। पर इतिहास इस बात का साक्षी है कि इस स्थल की मिट्टी तीनों धर्मों के अनुयायियों के बीच हिंसक संघर्ष के फलस्वरूप मानव रक्त से रँगी जाती रही है। दयालु ईश्वर के अनुयायियों द्वारा विगत चार हजार वर्षों से खून की होली खेली जाती रही है।

सोलोमन की मृत्यु (ई. पू. 933) के पश्चात बाहरी शक्तियों के दबाव से इजराइल राष्ट्र उत्तर और दक्षिण दो राज्यों में विभक्त हो गया। थोड़े ही समय में उत्तरी भाग के राज्य का तो अवशेष तक न बचा और दक्षिणी राज्य के यहूदी बेबीलोन की अधीनता में चले गए। ई. पू. 520 में वे मुक्त हुए, तब यहूदियों ने सोलोमन द्वारा बनवाए गए ध्वस्त मन्दिर का पुनर्निर्माण करवाया। जेरूसलम अधिक दिनों तक यहूदियों के अधीन नहीं रहा। इस पर फारसियों का कब्जा हुआ, बाद में वह सिकन्दर के अधीन आ गया। सन् 63 में यह रोमन साम्राज्य के अधीन आया। स्थानीय शासकों की मदद से 90 वर्षों तक रोमन साम्राज्य के अधीन रहा। रोमन साम्राज्य द्वारा नियुक्त प्रशासक पोंतिअस पिलेत (Pontias Pilate) के कार्यकाल में जेरूसलम में ईसा मसीह को सूली पर चढ़ाया गया।

सन् 70 में रोमन साम्राज्य के विरूद्ध स्थानीय ईसाईयों ने विद्रोह किया। विद्रोह कुचलने के दौरान जेरूसलम को ध्वस्त कर दिया गया। सन् 135 में पुनः विद्रोह भड़क उठा और ईसाईयों ने यहूदियों को ईश्वर याहोवा द्वारा प्रदत्त प्रतिश्रुत भूमि से खदेड़कर इस पर कब्जा कर लिया। रोमन सम्राट हेड्रियन (सन् 76-138) ने जेरूसलम की पुनर्स्थापना की। सन् 638 में मुसलमानों द्वारा अधिकृत किए जाने किए जाने के पहले तक यह ईसाईयों के अधिकार में रहा। सन् 638 में मुसलमानों ने इस पर अधिकार

कर लिया। ईसाईयों को यह बात हमेशा कचोटती रही। अतः मुसलमानों से अपनी पवित्र भूमि को मुक्त कराने के लिए पोप ने क्रूसेड (धर्मयुद्ध) का आह्वान किया। यूरोप के कई राज्यों में सामन्तों एवं साधारण ईसाई जनता के संयुक्त आक्रमण के फलस्वरूप सन् 1099 में इस पर ईसाईयों ने कब्जा किया जो सन 1187 तक बना रहा। इसके पश्चात मुसलमान तुर्क शासकों ने इसे ईसाईयों से छीन लिया। तब से सन् 1917 तक यह मुसलमानों के अधिकार में रहा। प्रथम विश्वयुद्ध में ब्रिटेन ने इसे अपने अधिकार में ले लिया। ब्रिटिश शासन के दौरान यहाँ यहूदियों का आना पूनः आरम्भ हुआ। दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान हिटलर द्वारा यहूदियों के विरूद्ध चलाए गए नरसंहार से बचने के लिए बड़ी संख्या में भागकर यहूदी इस क्षेत्र में ब्रिटेन के संरक्षण में आकर बसने लगे।

सन् 1948 में ब्रिटेन के सहयोग से, लगभग तीन हजार वर्षों बाद आधे इजराइल पर यहूदियों का शासन स्थापित हुआ। तब इसका आधा भाग जोर्डन के अधीन था। सन् 1967 में हुए युद्ध में इजराइल ने जोर्डन के अधीन वाले आधे भाग को मुक्त कर अपने राज्य में मिला लिया। तब से इस पर इजराइल का कब्जा है। इस्लाम और यहूदी धर्मों के बीच तनाव के कारण जेरूसलम निरन्तर अशांत क्षेत्र बना हुआ है। हाल में हुए समझौते के बावजूद जेरूसलम पर फिलिस्तीनियों ने दावा छोड़ा नहीं है और इसको लेकर इजराइल एवं अरब देशों के बीच संघर्ष की स्थिति बनी हुई है।

ईसवी सन् के प्रारम्भ से रोमन सम्राटों के अत्याचार के विरूद्ध ईसाई धर्मावलम्बी संगठित होने लगे थे। उनके प्रभाव का विस्तार आसपास के क्षेत्रों में होने लगा था। रोम के सम्राट नीरो ने अपने शासनकाल (सन् 64-68) में ईसाईयों पर बेपनाह जुल्म ढाए। उसी ने सन्त पीटर की हत्या कराई। ई. पू. 300 में सीरिया के राजा सेल्यूलस प्रथम द्वारा ओरोन्तेस (Orentes) नदी पर बसाए गए अन्तिओच शहर में सन्त पीटर ने बिशप परम्परा की नींव डाली थी। इसके बिशप इग्नातिअस को सन 117 में रोम के बाहर हिंस्त्र पशुओं के सामने छोड़ दिया गया था। इसी स्थान के पास काताकोम्ब्स (Catacombs) में इनको दफनाया गया। यही स्थान बाद में वेटीकन सिटी के नाम से प्रसिद्ध हुआ जहाँ कैथोलिक चर्च में पोप की अधिसत्ता कायम है।

तीसरी सदी के रोमन सम्राटों सेवेरस (Severus), डेसियस (Decius) और डायोक्लेतिअन (सन् 284-305) के शासनकाल में ईसाईयों को तरह-तरह से दंडित किया गया। डायोक्लेतिअन ने सन् 303 में चर्चों को नष्ट करने एवं पोप-पादरियों को गिरफ्तार करने का आदेश दिया। उसी के आदेश से सन् 305 में सन्त जॉर्ज की हत्या की गई।

ईसाई धर्म अनुयायियों के अनुसार सन् 313 में रोमन सम्राट कॉन्स्तेन्ताइन को क्रॉस दिखा और ईसा मसीह की वाणी सुनाई दी तो वह ईसाई हो गया। तभी से ईसाईयत राजसत्ता से जुड़ी। किन्तु सच्चाई यह है कि कॉन्स्तेन्ताइन को चर्च के बढ़ते प्रभाव से खतरा महसूस हुआ और अपनी सत्ता बचाने के लिए उसने ईसाई धर्म स्वीकार किया।

सम्राट कॉन्स्तेन्ताइन द्वारा ईसाई धर्म स्वीकार कर लिये जाने के बाद से ईसाईयों की शक्ति बढ़ गई। एक हाथ में तलवार और दूसरे हाथ में बाइबिल की कहावत का जन्म यहीं से हुआ।

रोमन सम्राट थिओडोसिअस महान (Theodosius, सन् 379-95) ने ईसाई धर्म को राजधर्म घोषित किया। इतिहास के इसी मोड़ से ईसाई धर्म के अनुयायियों द्वारा अपने धर्म के प्रसार के लिए अत्याचारों का सिलसिला शुरू होता है। रोमन सम्राट की आज्ञा से रोमन साम्राज्य के अन्तर्गत गैर ईसाई धर्मों और संस्थाओं पर न केवल प्रतिबन्ध लगाए गए वरन उन्हें देश से निष्कासित किया गया। उन पर अत्याचार किए गए। इससे पहले तक जिन अत्याचारों का शिकार ईसाई होते रहे थे, अब ईसाईयों ने गैर धर्मावलम्बियों पर वैसे ही क्रूरतम अत्याचार करने शुरू किए। बाद की शताब्दियों में ईसाई धर्म के नाम पर लोमहर्षक अत्याचार हुए। ईसाई धर्मगुरूओं के आदेश से गैर ईसाईयों, यहूदियों, बहुदेववादियों, मूर्तिपूजकों, जनजातियों, विधर्मियों, मुसलमानों का संहार किया

जाता रहा। दूसरी ओर, अपने ही सम्प्रदाय के विभिन्न शाखा-उपशाखाओं के अनुयायियों को मौत के घाट उतारा गया।

ईसाई धर्मावलम्बियों ने सबसे पहले बहुदेववादियों, मूर्तिपूजकों, पगनों पर आक्रमण किया और साथ ही विज्ञान और विवेकसम्मत सोच पर प्रतिबन्ध लगाया।

आरम्भ में ईसाई नेता ज्ञान और वैयक्तिक प्रयत्न की बजाय आस्था और आत्म-समर्पण पर जोर देते थे। वे दर्शन को खतरनाक और धर्म के रास्ते की सबसे बड़ी रूकावट मानते थे। ज्ञानपरक, विवेकशील दार्शनिक चिन्तकों के विरूद्ध उनका अभियान आरम्भिक काल से ही शुरू हो गया था, जो अठारहवीं सदी तक निरन्तर चलता रहा।

ईसाई धर्म का जो उदार और सेवाभावी रूप हम आज देख रहे हैं, इसका श्रेय धर्म ध्वजाधारी पोप-पादरियों को नहीं बल्कि सुधारकों और उन विवेकशील चिन्तकों, अनीश्वरवादियों को जाता है, जिन्हें विधर्मी करार देकर सदियों सताया जाता रहा।

कॉन्स्तेन्ताइन महान ने सन् 325 में एशिया माइनर के इसनिक (Isnik) में ईसाई धर्मावलम्बियों में पनप रहे मतभेदों को दूर करने के लिए काउन्सिल ऑफ चर्च (Council of Church) की बैठक बुलाई थी।

सन् 325 में शुरू हुई काउन्सिल ऑफ चर्च की परम्परा ने ईसाई मतावलम्बियों को धर्म के नाम पर ऐसी आचार-संहिता दी, जिसने धार्मिक जकड़न को मजबूत बनाया और ईसाई धर्म के स्वरूप को कट्टर बनाया। कालान्तर में काउन्सिल ऑफ चर्च ईसाईयों का अत्यन्त प्रभावशाली संगठन बन गया। इसके द्वारा दिए गए आदेशों और घोषणाओं के पालन के लिए लोगों को बाध्य किया गया। इसकी अवमानना को धर्म-विरोधी बताकर लोगों को मृत्यु-दंड तक दिए गए। काउन्सिल ऑफ चर्च ने दिखाने को तो दुनियाभर के ईसाईयों को चर्च के अन्तर्गत एकजुट किया पर इसका उद्देश्य ईसाई शासकों, पोप-पादरियों के हितों की रक्षा करना रहा। लोगों को इस कदर मानसिक रूप से गुलाम बना दिया गया कि वे इसकी अवहेलना को ईश्वर के प्रति घोर अपराध और पाप के रूप में लेने लगे। इसके द्वारा जारी एक आदेश के अनुसार प्रत्येक ईसाई को वर्ष में कम-से-कम एक बार पादरी के सामने पाप-स्वीकृति अर्थात कन्फेशन (Confession) करना पड़ता था।

चौथी सदी में सिकन्दरिया ज्ञान का केन्द्र माना जाता था। वहाँ के पुस्तकालयों में दर्शनों की पुस्तकों का बाहुल्य था। सन् 390 में चर्च के आदेश से उन पुस्तकालयों को धर्म-विरोधी बता जलवा दिया गया। इसके पच्चीस वर्षो बाद सन् 415 में सिकन्दरिया के एक ज्योतिषी की पुत्री हिबाशिया (Hibashia) का जो गणित की पंडित थी, ईसाई धर्मान्धों ने वध करवा दिया। स्वतन्त्र चिन्तन के केन्द्र एवं दर्शन के सारे विद्यालयों को जस्टिनियन-प्रथम (Justiniun-I) के आदेश से यह कहकर बन्द करवा दिया गया कि इन दर्शनों से ईसाई धर्म को खतरा है।

गैर धर्मावलम्बियों पर अत्याचार की श्रृंखला और ईसाई सम्प्रदाय के लोगों को धार्मिक शिकंजे की गिरफ्त में लाने के प्रयास ईसाई धर्म के राजसत्ता से जुड़ने से पहले हो गए थे। ज्ञान और विवेक से लोगों का रूख मोड़ने के साथ-साथ उनमें अन्धास्था और ईश्वर एवं धर्म के प्रति पूर्ण समर्पण की भावना भरने की सुनियोजित व सुसंगठित चेष्टा पोप-पादरियों की ओर से आरम्भिक काल से ही शुरू हो गई थी। यह कहा गया कि भगवान पिता हैं और चर्च माँ। बिशप चर्च के पूरक और मुक्तिदाता हैं। पादरियों की एक बड़ी फौज तैयार की गई जिनका काम साम-दाम-दंड़-भेद की नीति से लोगो को ईसाई धर्म में दीक्षित करना था।

शेष अगले अंक में जारी...

धर्म के नाम पर, पुस्तक से साभार

आईना

बलजीत भारती

छोटे होते लोग

(1)

मेरा काम के सिलसिले में अक्सर कैथल आना-जाना लगा रहता है। रास्ते में एक गांव आता है (नाम बताने से कोई फर्क नहीं पड़ेगा)। उस गांव के साथ लगती काफी जगह खाली पड़ी थी। क्यूंकि वह जगह काफी गहरी थी, इसलिए गांव वालों ने इक्ट्ठे होकर वहां मिट्टी डालकर भराव कर दिया। मैं आते-जाते देखता था तो सोचता था कि यहां पर कोई बढ़िया चीज बनेगी, लेकिन जल्दी ही मेरा भ्रम टूट गया। कुछ ही दिनों में वहां साथ-साथ तीन छोटी-छोटी इमारतें खड़ी हो गयी। उन इमारतों के ऊपर जो लिखा था, उस को पढ़कर मुझे बड़ी ठेस पहुंची। एक के ऊपर लिखा था- प्रजापत चौपाल, दूसरी के ऊपर लिखा था- ब्राह्मण चौपाल। तीसरी के ऊपर कुछ नहीं लिखा था। मेरे पूछने पर स्थानीय निवासी ने बताया कि यह गुज्जर चौपाल है। मेरे दिमाग में अभी तक जो भाईचारे की तस्वीर बनी थी, पूरी तरह धूमिल हो चुकी थी। कितना ही अच्छा होता कि उन तीनों छोटी-छोटी चौपालों की जगह एक ही सांझी चौपाल बनाई जाती और उसके ऊपर लिखा जाता- 'हमारी चौपाल'।

(2)

राष्ट्र मंडल के खेलों में मनोज कुमार ने मुक्केबाजी का स्वर्ण पदक जीता। पदक जीतने के बाद अखबार में मैंने एक टिप्पणी पढ़ी- 'मनोज ने किया 'क' जाति का नाम रोशन। मैं सोच रहा था कि एक अन्तर्राष्ट्रीय खिलाड़ी को महज एक जाति का बताकर उसे कितना छोटा बना दिया गया है।

(3)

एक अध्यापक होने के नाते मैं 'अध्यापक संघ में सक्रिय हूं। हरियाणा में अध्यापकों के दर्जनों संगठन बने हुए हैं। दो-तीन बड़े संगठनों के अतिरिक्त हैडमास्टर और प्रधानाचार्यों का अलग से संगठन है। लेक्चरर का हसला के नाम से अपना सगठन है। अभी मिडल मुखियाओं ने अपना अलग से संगठन बनाया है। सभी विषयों के विषयवार संगठन बने हुए हैं। यही पर बात नहीं रूकी। जाति के आधार पर भी अपने-अपने संगठन बना लिए गए हैं। अनुसूचित जाति अध्यापक संघ व रोड़ कर्मचारी संघ इसका उदाहरण हैं। अनुबन्ध पर लगे अध्यापकों ने अपना संगठन अनुबंधित अध्यापक संघ के नाम से बनाया है। हद तो तब हो गई जब कुछ लोगों ने अनुसूचित जाति अनुबंधित अध्यापक संघ भी बना डाला। नीचे गिरने की कोई सीमा नहीं होती। सचमुच आदमी दिनों-दिन कितना छोटा होता जा रहा है।



तर्कशील लहर के नायक दिवंगत कृष्ण बरगाड़ी के 12वें स्मृति दिवस पर उनके गांव बरगाड़ी में तर्कशील चेतना समारोह में जीव विज्ञानी एवं प्रसिद्ध लेखक डा. सुरजीत सिंह ढिल्लों को कृष्ण बरगाड़ी स्मृति सम्मान प्रदान करते तर्कशील सोसायटी पंजाब के पदाधिकारीगण





विजयवाड़ा नास्तिक केन्द्र के 75वें वार्षिक समारोह के चित्र



बठिंडा, मानसा, बरनाला, फाजिल्का जोन की तर्कशील कार्यशाला



अंधविश्वास रोकथाम कानून 2014 के प्रस्तावित ड्राफ्ट पर मोहाली में विचार चर्चा

Reg. No. HARHIN05683/07/1/2013-TC

अंक - 2

तर्कशील साहित्य वाहन का प्रारम्भ

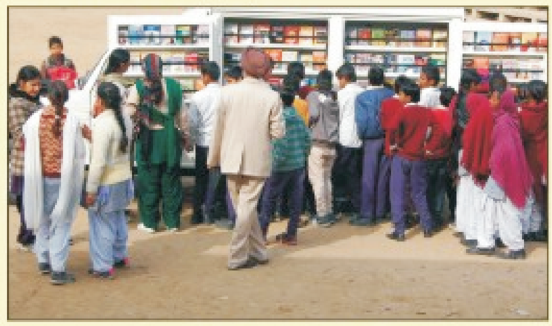
स्वागतम्



लोक नायकों के संदेश देते चित्र



पुस्तकों का बुलावा



पुस्तकों में रुचि दिखाते विद्यार्थी



17 जनवरी 2014 को राजकीय एलीमेंट्री स्कूल रघुवाणा जिला सिरसा (हरियाणा) में तर्कशील साहित्य वाहन का प्रराम्भ किया गया।

If undelivered please return to :

Tarksheel

Tarksheel Bhawan, Tarksheel Chowk,
Sanghera Bye Pass, BARNALA-148101
Post Box No. 55

Ph. 01679-241466, Cell. 98769 53561
Web : www.tarksheel.org
e-mail : tarkshiloffice@gmail.com

BOOK POST
(Printed Matter)

To ....

....

....